स्त्री-हितोपदेश

द्वारकाप्रसाद अत्तार.

* ओ३म् *

स्त्री-हितोपदेश

जिसको

मुं० द्वारकाप्रसाद अत्तार

बाज़ार बहादुरगंज शाहजहांपुर ने
स्त्री जात्ति के लाभार्थ विविध
ग्रन्थोंसे संग्रह कर
प्रकाशित किया।

द्वितीयबार } सन् १९१६ ई० { मूल्य ।=)

समर्पण ।

प्रिय पाठिकाओ ! आपने बड़े २ विद्वानों के स्त्री शिक्षा पर रचे हुए बड़े २ ग्रंथ पढ़े और उनसे लाभ उठाया होगा।

परन्तु आज मैं इस तुच्छ पुस्तक को कि जिसका नाम "स्त्री-हितोपदेश" रक्खा है विविध ग्रंथों से चुनकर आप के अर्पण करता हूं और आशा करता हूं कि आप इसे आद्योपांत पढ़कर जहां स्वयं लाभ उठावें, वहां अपनी अन्य बहनों तथा पुत्रियों को भी इस से लाभ पहुँचायें।

मैं अपना परिश्रम जब ही सफल समझूंगा कि जब आप इसे सादर ग्रहण कर इससे यथोचित लाभ उठावेंगी।

शाहजहांपुर
७-११-२०

आपका हितचिन्तक,
द्वारकाप्रसाद अत्तार.

ओ३म्।

स्त्री-हितोपदेश

प्रथमाध्यायः

❋ कुमारी-धर्म ❋

महो अर्णः सरस्वती प्रचेतयति केतुना ।
धियो विश्वा विराजति ॥ यजु० अ० २० मं० ८६

हे स्त्री लोगो ! जैसे (सरस्वती) वाणी (केतुना) उत्तम ज्ञान से (महः) बड़े (अर्णः) आकाश में स्थित शब्द रूप समुद्र को (प्रचेतयति) उत्तम प्रकार से जतलाती है और (विश्वाः) सब धियः बुद्धियों को (वि, राजति) नाना प्रकारसे प्रकाशित करती है वैसे विद्याओंमें तुम प्रवृत्त होओ।

हे पुत्रियो ! परमात्मा इस वेद मंत्र द्वारा तुम्हें उपदेश करते हैं कि कन्याओंको चाहिये कि ब्रह्मचर्य्य से विद्या और सुशिक्षाको समग्र ग्रहण करके अपनी बुद्धियोंको बढ़ावें ।

किसी कविका वचन है—

शिक्षा निशिदिन गहहु तुम, प्यारी चतुर सुजान।
जासे सुख अरु सम्पदा, जग में हो बहु मान॥
कंकन से सोहत न कर, कुंडल से नहिं कान।
चन्दन से सोहत न तन, गुणते शोभित जान॥

सबसे पहले तो तुम शांतिचित्त और स्थिर होकर बैठना सीखो, इतराना, मटकना और चंचलता छोड़ो, कभी हठ न करो, बड़ों का कहा मानो और डरो, क्योंकि—

उपदेशैं हित के वचन, इष्ट मित्र समुदाय।
जो हठकर मानै नहीं, सो पीछे पछिताय॥

झूठ कभी न बोलो, कोई अपराध भी हो जाय तौ न छिपाओ, सत्य सत्य कह दो और क्षमा मांगो, झूठ बोलने से साख प्रतीति जाती रहती है, सच्ची बात का भी कोई विश्वास नहीं करता, परमेश्वर बुरा मानता, मा बाप नाराज़ होते और अपने पराये झूठे का सब निरादर करने लगते हैं।

झूठी का आदर नहीं, नहीं झूठ सम पाप।
साख जाय चिंता रहे, झूठ वचन को ढांप॥
सत्य सदा जय करत है, झूठ पराजय होत।
सत्य बढ़ावै कान्ति को, झूठ नशावै जोति॥

सच बोलने से बड़ाई मिलती, मान बढ़ता, परमेश्वर प्रसन्न होता, माता पिता प्यार करते और सब लोग कहा मानते हैं और धर्म भी सुधरता है, 'सत्यमेव जयते नानृतम्' अर्थात् सत्यही की सदा जय होती है,और भी कहा है कि:-

जहां सत्य तहँ धर्म है, जहां सत्य तहँ योग।
जहां सत्य तहँ श्रीरहत, जहां सत्य तहँ भोग॥
वायु बहत है सत्य ते, जलत सत्य ते आग।
सत्यहि ते धरती थमी, सत्य होत बड़भाग॥

इस लिये हे पुत्रियो ! इन महानुभाव कवियों के वचनों पर ध्यान देकर—

सत्य भावको गहहु तुम, तजो झूठ को भाव।
नहिं असत्य सम पापजग, पुण्य सत्य सों पाव॥

कभी किसी को गाली भी न दो, गाली देने से ज़बान बिगड़ती है और सुनने वाले बुरा कहते हैं जिस को गाली दीजाती है वह बैर मानता है और जो पलट कर वह भी गाली दे तो सारी प्रतिष्ठा मिट्टी में मिल जाती है और यदि मार बैठे तो दुख भी होता है। इसवास्ते गाली देना तो बुरा है किसी को तू करके भी न बोलो, न कोई कड़वी बात कहो इस से मन फट जाता है और कलेजे में ऐसी चोट लगती है जिस की कोई औषधि नहीं, इस वास्ते सदैव सत्य बोलो और प्रिय बोलो किसी बुद्धिमान का वचन है—

काहू से कड़वे वचन, मत कह कबहूं जान।
तुरत मनुजके हृदयको, छेदत है जिम बान॥

अन्धे, काने, लूले, लँगड़े और दुखी किसी को कभी मत चिढ़ाओ क्योंकि इससे उनको दुख होता है और परमात्मा अप्रसन्न होते हैं।

अंग भंग काना बहिर, कूबड़ लंगड़ देख।
कीजे नहिं उपहास कुछ, आपन हित अवरेख॥

कोई हो सबसे मीठा और धीमा बोलो, झुक के चलो और अपनी वित्त से बढ़कर कभी कोई बात न कहो, मीठा बोलने और निवकर चलने में सब सराहते और जीसे चाहते हैं, देखो—

कागा काको धन हरै, कोयल काको देय।
मीठे वचन सुनाय के, जग अपनो कर लेय॥

किसी के साथ लड़ाई झगड़ा रखना, बैर विरोध करना या दूसरे को अच्छा पहने ओढ़े देख के जलना और उसकी बड़ाई सुन के डाह और ईर्षा करना, यह सब बुरे लक्षण हैं, इनसे कलह बढ़ती और अपनाही चित्त आठों पहर तप्त और दुखी बना रहताहै, किसी कवि ने कहा है, कि—

जो नारी ईर्षावती, जरत देख पर हित्त।
डाहखुन्स निज मनधरै, शीतलता नाहिं चित्त॥

और लड़ने वालियों के लिये लिखा है कि—

कलहारी अरु कर्कशा, नित प्रति रक्खे रार।
जिसघर नारी कर्कशा, उसघर दुःख अपार॥

इस लिये हे प्यारियो! कोई कुछ कहे भी तो चुप हो जाओ, एक चुप हजार बला टालती है, कभी क्रोध मत करो क्योंकि क्रोध की अग्नि पहले क्रोध करने वाले को ही भस्म कर देती है तब दूसरे तक पहुँचती है, इससे हे प्रिये! मनको सदैव ठंडा और चित्त को प्रसन्न रक्खो, कुढ़ना झुंझलाना और बात बात में नाक भौं चढ़ाना सब छोड़ दो, क्योंकि ऐसी बातों से स्वभाव चिड़चिड़ा पड़ जाता है देह पर मांस नहीं चढ़ता शरीर दुर्बल होजाता है, रोग घेर लेते हैं और आयु घट जाती है, दुष्ट स्वभाव लड़की सबके जी से उतरी रहती है!

क्रोधप्रकृति जिसनारिकी, दहतचित्त निज नित्त।
औरों को दुख दे वृथा, सबसे रह अनहित्त॥
ज्ञान मान बल प्रेमको, क्षणमें डाले खोय।
क्रोधवती नारी सदा, आयु गमावे रोय॥

किसी की निन्दा करना, पीठ पीछे बुरा कहना और चुगली खाना अच्छा नहीं, यह भी क्लेश की जड़ और बैर का घर है, इस लिये—

चुगली रोष क्रोध नहिं कीजे।
असत वस्तु कबहूँ नहिं लीजे॥

बुद्धिमानों ने इस को इतना बुरा ठहराया है कि उसके सुनने में भी दोष लगाया है और लिखा है—

चुगली सुनत बहिर सम होऊ।
फिर फिर कहे सुनहु जिन सोऊ॥

लालच भी बड़ी बुरी वस्तु है, इससे हंसी होती है, मान घटता और दुःख बढ़ता है, और अन्त में उसी तरह पछताना पड़ता है जैसे कि—

शहत पंख लपिटाय के, माखी यों पछिताय।
हाथ मले अरु शिर धुने,लालच बुरी बलाय॥

शास्त्र कहता है कि—

लोभ महा रिपु देहमें, सब दुःखों की खान।
पाप मूल अरु प्राण हर, तजे ताहि मत मान॥
यशी पुरुषके विमल यश, गुनियों के गुन नेह।
तनिक लोभमें नसत सब,फूल परे जिमि देह॥
देह धर्म कुल धर्म अरु, तजे तुरत पितु मात।

लोभ विवश नर करतहै, मित्र विप्र गुरु घात॥
क्रोध काम अहंकार ते, लोभ महा बलवान।
जाके वश ह्वै तजतु हैं, दुर्लभ प्रिय नर प्रान॥

इस लिये कभी किसी की अच्छी वस्तु पर जी न चलाओ, जो कुछ परमेश्वर ने अपने घर में दिया हो उसी में सन्तोष रक्खो और यह प्रार्थना करो कि—

हे सन्तोष सुसम्पदा, हमें करो धनवान।
यद्यपिजगमें बहुतधन, नहिंकोउ तोहिसमान॥

चटोरी भी न बनो क्योंकि—

जीभ न जाके वश रहे, सो नारी मतिहीन।
धन लज्जा आरोग्यता, करै प्रतिष्ठा छीन॥
ऋणी दुखी निज को करै, नारि चटोरी जोय।
झूठ डाह कपटादि सब, औगुण ताके होय॥

रूखा सूखा जो घर में मिले प्रसन्न चित्त होके खालो और परमेश्वर का धन्यवाद दो, कहा है कि—

सोई अहार उत्तम कहलावे।
जो अपने घरमें बन आवे॥

अन्न को देखकर कभी मुंह न बिगाड़ो, न बुरा कहो, जो कुछ सामने आवें आदर पूर्वक सुचित्त बैठ के खालो, अन्न की निन्दा करने और ठसक पटक के खाने से अवगुण होता है, देह नहीं पनपती और बल घटता है। प्रसन्नता के साथ क्रम से खाने में शरीर पुष्ट होता और चित्त शांत रहता है, बिना भूख और बहुत खाना भी अच्छा नहीं, इससे आलस्य बढ़ता, रोग उत्पन्न होते और आयु घटती है और लोग भी हंसते और पेटार्थू कहते हैं।

भोजन सोइ सराहिये, जो शरीर सुखदाइ।
दुखदाई वह होत है, जो मित से अधिकाइ॥
रसमय गुणमय स्वादमय, बिनइच्छा विष तूल।
सूखी रोटी भूख में, होत मधुर सुख मूल॥

चौपाई

थोर अहार करै नर जोई।
कठिन समय काटे सुख सोई॥
बहुत खाय जो पेट बढ़ावे।
विपति काल सो प्राण गँवावे॥

पहिरना ओढ़ना, उठना बैठना, बोलना चालना, सब ऐसा सँवारो कि कोई फूहड़ लुच्ची और निर्लज्ज न कहे,

कपड़े अपने संभाल के धरो उठाओ, घास की तरह न फेंको और इस प्रकार पहिनो ओढ़ो कि न जल्दी फटें और न मैले हों।

गहने और महीन वा किनारी गोटे के कपड़ों का चाव न करो, मोटे पर उजले कपड़े पहिनो, और ऐसे जिनसे सारा शरीर ढका रहे कोई अंग उघारा न होने पावे।

सुशीलता के साथ उठो बड़ों के सामने लेटना, पांव फैलाना, हाथ पैर नचाना इत्यादि दोष हैं।

बड़ोंको जब आते देखो खड़े होकर झुकके नमस्ते करो वह बैठ लें तब एक किनारे हाथ पैर समेट और माथा निवा के बैठ जाओ वह किसी और से बातें करते हों (या करती हों) तो बीच में न बोलो जब वह तुम से कुछ कहें, चित्त लगा के सुनो और आंखें नीची करके मधुरता और नम्रता के साथ उत्तर दो, बिना अवसर कभी न बोलो न बे समझे बूझे कोई बात मुँह से निकालो, जो कोई कुछ कहे पहिले अच्छी तरह सोच समझ लो तब जवाब दो—

वचन पारखी होहु तुम, पहिले आप न भाख।
अनपूछे नहिं भाखिये, यही सीख जिय राख॥

चलने फिरने में उछलती कूदती और हाथ नचाती न चलो, शिर झुका के और सब से बची हुई धीरे २ चला करो, रास्ते में कहीं खेल तमाशा होता हो तो खड़ी होके देखने न लगो, बुरे और खिलाड़ी लड़के वा लड़कियों के संग कहीं न जाओ, न उनकी संगत में बैठो। सुशील चतुर

और हँसमुख स्वभाव और बराबर वालियोंसे प्यार बढ़ावो, और बूढ़ी बुद्धिमान और गुणवान स्त्रियों के पास बैठा करो लिखा है—

सहज सुसंगत होत सुख, दुख कुसंग स्थान ।
गन्धी और लोहारकी, देखो बैठ दूकान ॥
दोष संगत ते नसत हैं, संग पाय बनजांय ।
कांजी ते पय फटत है, दधि डारे जमजाय ॥
पशु पक्षी जड़ जन्तु जे, तेहू संगत पायं ।
होत चतुर तज देत हैं, अपने अशुच सुभाय ॥

अपनी माता को पृथ्वी से भी अधिक बड़ी और पिता को आकाश से भी ऊंचा समझो । देखो जैसे पृथ्वी संसार का बोझ अपने ऊपर लादे हुए सब को सुख पहुंचाती, अन्न देती और पालन करती है, वैसेही तुम्हारी मां भी तुम्हारे वास्ते अनेक कष्ट सहती और बड़े दुखों से तुमको पालती है, और जिस तरह आकाश सब पर छाया किये रहता और कल्याणके निमित्त मेह बरसाता है, उसी तरह तुम्हारा बाप भी तुम पर छत्र रखता और हजारों उपाय से रक्षा और पालन करता है, यह दोनों तुम्हारे सुख के हेतु जो २ दुख उठाते हैं, शरीर में जितने रोम हैं उतने वर्ष भी तुम उनकी सेवा करो तौ भी उद्धार नहीं होसक्ती। तुमको चाहिये कि नित्य सवेरे सांझ उनको झुककर नमस्ते कियाकरो, भय मानो और आज्ञा पर चलो, और उनकी सेवा और वंदना में रहो ।

अपने पराये जितने बड़े हैं सब को देवताओं के समान जानों, बूढ़े और पुराने जो नौकर हों उनका भी आदर करो और कहा मानो। इसी तरह से—

बहिन भाइ भावज संग प्रीती ।
सहित सनेह करहु यह रीती ॥
बैर भाव जो घर में राखत ।
ताको उत्तम कोऊ न भाखत ॥
सहन शील निज करहु स्वभावा ।
जो सब नर नारिन को भावा ॥

इन सब रीतियों से अपने चलन संभारो और इस दोहे को समझ के, कि—

बालावस्था पाय जो, विद्या सीखत नाहिं ।
सो पशुके सम तुल्यनर, जीवत या जगमाहिं ॥

जिस तरह सज्जन लड़के अनेक विद्या सीखने और रात दिन लिखने पढ़ने में लगे रहते हैं, तुम भी खेल कूद छोड़ के उत्तम गुण और सुन्दर विद्याओं के सीखने में जी लगाओ जिसमें जल्दी से चतुर होजाओ और जिस घर जाओ मान और सत्कार पाओ। क्योंकि—

मान होत है गुनन ते, गुन बिन मान न होय ।
शुकसारी पालें सबी, काग न पाले कोय ॥

जो लड़की लिखने पढ़ने में ध्यान नहीं लगाती, अनपढ़ और गुणहीन रह जाती है। वह जन्म भर पछताती, माता पिता की हँसी कराती और उठते बैठते ससुराल वालों के ताने सुनती है। कि—

मैके पशु यह रही चरावत।
नारि धर्म कछु एक न जानत॥

परन्तु जो विद्या और गुणों से भरी पूरी होती है, वह संसार के सुख भोगती और जहां जाती आदर पाती है। विद्या माता के समान रक्षा करती, पिता के तुल्य हित में लगाती, सारे दुःखों को काटती, यश और कीर्ति को बढ़ाती है।

विद्या देती विनय को विनय पात्रता योग।
जिनते धन धनसे धरम जिन सुख भोगत लोग॥

विद्या के प्रकाश से वह वह पदार्थ देख पड़ते हैं जो कभी आंखों से दिखाई नहीं देते, और ऐसी बातें जान मिलती हैं जो यूं विचार में नहीं आतीं। पोथियों के पढ़ने से घर बैठे देश देशान्तर के समाचार बिदित हो जाते हैं, पिछले वृतांत और सब व्यवहार आंखों के सामने फिरने लगते हैं और चित्त अत्यन्त प्रसन्न रहता है। कहा है—

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्न गुप्तंधनम्।
विद्या भोगकरी जगयशकरी विद्या गुरूणांगुरुः॥

विद्या बन्धुजनो विदेशगमने विद्या परं दैवतम्।
विद्या राज सुपूजिता शुभधनं विद्या विहीनः पशु॥

अर्थ—विद्या के होने से रूप की शोभा बढ़ जाती है, इस गुप्त धन से बड़ाही सुख मिलता और जगत वश हो जाता है। विद्या सब की परम गुरु परदेश में भाई, बन्धुवों के तुल्य सुख देती है, यह सब देवताओं से बड़ी और इसके प्राप्त होने से बड़े २ राजे मान करते हैं और जिसके पास यह नहीं है उसको सब पशुके बराबर समझते हैं।

किसी कवि ने इन्ही श्लोकों का उल्था यों किया है कि—

विद्या नर को रूप भूप आदर सरसावे।
विद्या धन अति गुप्त आपको आप रखावे॥
विद्या गुरू महान भोग सुख करत हित।
विद्या देश विदेश बीच में होत मातु पित॥
विद्या इष्ट समान है सदा देह रक्षा करत।
विद्या रत्न विहीन नर धरतीमें पशुसम चरत॥

इस लिये—

धन सुख सम्पति भोग वे, अरु राजनको राज।
जो तू चाहे सहज में, पढ़ विद्या तज काज॥

अपना समय एक छिन भी वृथा न गँवावो, नियम बांध के नित्य दो घड़ी रात रहे उठो मल मूत्र त्याग हाथ मुँह धो परमेश्वरका स्मरण कर पहिले पिछला पाठ कर जाओ, फिर आगे जो पढ़ना है उसको अपने आप उठाओ और अर्थ लगाओ इस के पीछे पोथी हाथ में लेके थोड़ी देर कोठे पर अथवा आँगन में टहलो और श्लोक दोहे चौपाई और छन्द जो पढ़े हों उन को टहलते हुए कंठ कर डालो।

इस तरह अभ्यास करने से दोनों काम निकलेंगे, पाठ भी याद होजावेगा और सवेरे की हवा खाने और टहलने से जी हरा होगा, बुद्धि बढ़ेगी और देह में बल भी आवेगा।

किसी कवि का वचन है कि—

प्रात समय की वायु को, सेवन करत सुजान।
ताते मुख छवि बढ़त है, बुद्धि होत बलवान॥

इसके पीछे जो गुरू के पास पढ़ने जाने का समय अभी न आया हो, अथवा पढ़ाने वाली के आने में देर हो, तो जल्दी से रसोई के वास्ते दाल चावल चुन डालो या माता जो धंधा बतावे फुरती से कर डालो।

गुरुवानीजी के पास जब पहुंचो झुकके प्रणाम करो और सावधान हो कर बैठो, जो वह पढ़ावें या बतलावें चित्त लगाके पढ़ो और सुनो, जहां न समझो या भूल जाओ पूछलो और अच्छी तरह से याद कर डालो फिर अपनी माता के पास जाकर रसोई के कामों में उसकी सहायता करो और जो पदार्थ वह जिस भांति बनाती हों, उसको देखो और समझो

चटनी रायता इत्यादि बनाओ और पिता, चाचा, भाई आदि के भोजन के निमित्त उनके आने से पहले चौके में आसन बिछा के, पानी गिलास चमचा अचार चटनी मुरब्बा इत्यादि जो २ पदार्थ उनको रुचिकर हों सब धोई पोंछी प्यालियों में रख के सुंदर थाल में जमा दो और पान लगाकर गिलौरियां बना रक्खो। जब वह खाने बैठें खड़ी होके मक्खी हिलाओ और जब खा चुकें हाथ धुलाकर पान दो।

मां को जब रोटी बनानी न हो तब तुम आप बनाओ और ध्यान रक्खो कि कोई पदार्थ जलने न पावे, न कच्चा रह जावे, नमक और ताव भाव सब का ठीक हो, रंग रूप सुथरा और स्वाद अच्छा उतारे, हांडी हांडीकी करछी जुदी २ रक्खो, न हों तो एक की सनी दूसरी में धो पोंछ के डालो, पोंछने के निमित्त चौके में एक अंगौछा भी रख लिया करो और हाथों में कुछ भर जाये तो तुरंत उसी अंगौछे से पोंछ डालो, जिस में कपड़े मैले न हों और भोजन भी घिनौना न होने पाये। जो पदार्थ पका के पतीली से निकालो वह सुथराई के साथ अलग २ ऐसे वर्तनों में ढक के रक्खो जिन का कसाव न उतरे।

खाना खिलाने के पीछे थोड़ी देर आराम कर गृहस्थी के जो और धंधे हों उन में भी माता का हाथ बटाओ और रखने ढकने चुनने बीनने सब से जल्दी छुट्टी करके अपनी स्लेट पिनसिल वा पट्टी या कागज कलम और दावात लेके घंटा भर लिखो। लिखने में जब तक अच्छे अक्षर न बने बड़े २ हरफ लिखो, और जिस में अक्षर टेढ़े मेढ़े और

बड़े छोटे न होने पावें, दुहरा रूल अर्थात् पिनसिल से दुहरी लकीर खींच लो और उन्हीं दोनों लकीरों के बीच में सब अक्षर जुदे जुदे और बराबर २ बनाओ, जब हाथ जम जाय और अक्षर सुंदर बनने लगें तब रूल खींचना छोड़ दो और उसी तरह छोटे अक्षर लिखने में अभ्यास बढ़ाओ।

जब अक्षर लिखना अच्छी तरह आजावे, तब अपना पढ़ा हुआ पाठ पहले कुछ दिनों पोथी देखकर लिखो; फिर अपनी याद से लिखकर पोथी से मिलाकर देखो कि कहां भूल हुई है, और जहां भूल हो वहां ठीक करलो, इस रीति से अभ्यास करने से पाठ भी खूब याद होजायगा और लिखने की भी शक्ति बढ़ेगी।

लिखने के पीछे थोड़ी देर हिसाब लगाना भी सीखो, और पहाड़े न आते हों तो सीख लो, इन से जोड़ने और गुणने में बड़ी सहायता मिलती है, और कोई बताने वाली मिले तो चित्र खींचना भी अवश्य सीखो, इसके बाद सुई लेके बैठो, कुछ सीना न आता हो तो पहले सीधी सिलाई करो, जब उस में हाथ जम जाये तब तुरपना और बखिया करना सीखो, मर्दाने जनाने सब तरह के कपड़ों की काट छांट समझो कसीदा काढ़ो, बेल बूटे बनाओ, मोजे दस्ताने गुलूबन्द आदि बिनो, और भांति २ के सुई के काम चित्त लगाके सीखो कि यह सब गुण आगे बहुत काम आवेंगे कम से कम दो घंटे रोज इस में परिश्रम करो।

इसके पश्चात् यदि किसी को चिट्ठी पत्री भेजनी हो तो उस समय लिखकर भेजदो, परन्तु जब तुम किसी को चिट्ठी

पत्री लिखो, इस बात का ध्यान रक्खो कि कागज़ मैला कुचैला या कटा फटा नहो, न छोटासा टुकड़ाही हो।

चिट्ठी लिखने के कागज जिन्हें लेटर पेपर कहते हैं और जो बाजार में पैसे के चार ताव बिकते हैं, उसके पूरे ताव पर चार पांच अंगुल सिरा छोड़ एक वा दो अंगुल दोनों किनारे मोड़के सीधी सतरें और हरफ बना २ के ळिखाकरो, चिट्ठी में सिरे पर प्रथम ओ३म् और अपने स्थान का नाम और मिती वा तारीख इस प्रकार लिखो—

असाढ़ सुदी पूर्णिमा ओ३म् शाहजहांपुर
सं० १६६७

फिर सरनामे में बड़ों को ५ बराबर वालियों को ३ और जो छोटी हों उनको १ श्री सहित एक दो ऐसे शब्द भी लिखो जिनसे चिट्ठी जिसको लिखनी हो उसकी बड़ाई आदर सत्कार इत्यादि की उपमा पाई जावे।

जैसे पिता आदि को लिखना हो तो ऐसे शब्द हों—

सिद्धिश्री प्राणदाता या करुणानिधि दीनरक्षक सर्व्वोपमा योग्य श्री ५..................(इस स्थान पर जिस नाम से पुकारती हो वह लिखो)

माता आदिको—श्रीमति दयामान करुणामय, प्रेमागार श्री ५ माता जी नमस्ते !

बड़े भाई को—सिद्धिश्री सकलगुणनिधान दयाकी खान श्री ५ भ्राता जी नमस्ते !

छोटे भाई को—स्वस्ति श्री चिरंजीव जीवनमूल श्री १ हरीश्चन्द्रजी नमस्ते !

छोटी बहिन को—प्राणप्यारी नेत्रप्रकाशिनी श्री १ ज्ञानवती जी नमस्ते !

भावज को—सौभाग्य शिरोमणि परम सुशीला श्री ३ ……………… जी नमस्ते !

ननद को—परम माननीय शील शिरोमणि श्री ३ बहिन जी नमस्ते !

बड़ी ननदको—श्रीमती महामान्या परमपूज्या श्री ५ देवी जी नमस्ते !

जेठानी को—श्रीमती सर्व गुणखान, शीलमान, कृपावन्त श्री ५ बहिन जी नमस्ते !

देवरानी को—रूपनिधान, शीलमान, पतिप्रमोदिनी श्री ३ बहिन जी (या जिस नामसे पुकारतीहो लिखो) नमस्ते !

बहू को—कुल दीप्ति, शीलवन्त, सौभाग्य परिपूरण प्रियवादिनी श्री १ बहू जी नमस्ते !

सखी को—प्राणप्रिय, सुभगे, परमस्नेही परमविज्ञशीला श्री ३ बहिन जी नमस्ते !

पति को—प्राणनाथ, प्राणजीवन, मम सौभाग्य दायक श्री ५ स्वामिन् नमस्ते !

शायद तुम्हारे मन में यह सन्देह उत्पन्न हुआ होगा कि प्रणाम, दण्डवत, पायलागन, दुआ, सलाम, रामराम, जैसीताराम, जैरामजी की इत्यादि को छोड़ कर सब को एक तरफ़ से नमस्ते नमस्तेही बता दिया, सो सन्देह उत्पन्न न हो यह प्राचीन शब्द है और इसके अर्थ बड़े ही विचित्र हैं। यह जब बड़ों को किया जाता है तब मान्यवाचक होता है, बराबर वालोंमें आदर सत्कार और प्रेमवाची होता है, छोटों को जब

किया जाता है तब रक्षा का भाव उत्पन्न होता है, जैसा प्रेम उत्पादक और अभिमान शून्य यह शब्द है वैसा और कोई नहीं अधिक व्यवस्था जो देखना हो तो पं० लेखराम जी रचित कुल्लियात आर्य्य मुसाफिर में देखो।

सरनामे के बाद कुशल क्षेम और फिर जो लिखना हो साफ़ २ लिखो और ऐसे शब्दों में लिखो कि शब्द तो थोड़े हों, परन्तु भाव अधिक निकले, जब चिट्ठी समाप्त हो तब अन्त में अपना नाम ऐसे पदों के साथ लिखा करो जिनसे आधीनता पाई जावे, जैसे आपकी दासी, सहचरी, अनुचरी, शुभाकांक्षी दर्शनाभिलाषिनी, कृपापात्र इत्यादि।

तीसरे पहर कुछ जलपान करके फिर दो घंटे पढ़ो और यों अपना सब काम पूरा करके घंटा भर सखी सहेलियों के साथ खेलो गाओ बजाओ और दिल बहलाओ, सांझ को अपनी माता के साथ रसोई का धंधा करो व्यालू बनाओ और सबको खिला पिलाके घंटे दो घंटे फिर पोथी लेके बैठो और दिन भरका पढ़ा लिखा विचारो और ऐसा जी लगाओ कि छोटी २ पुस्तकें जल्दी समाप्त होजावें, और बड़े २ ग्रन्थ पढ़ने लगो जिसमें बुद्धि बढ़े और नये २ गुण और सुन्दर बिद्याओं के सीखने में सुगमता हो।

फिर जब सोने लगो पहले परम पिता परमात्मा का शुद्ध चित होकर ध्यान करलो और इस मन्त्र द्वारा ईश्वर प्रार्थना करके सो रहो।

ओंसहनाववतुसह नौभुनक्तुसह वीर्य्यं करवावहै। तेजस्विनावधीतमस्तुमाविद्विषावहै॥ ओंशान्तिः ३

हे परमेश्वर सर्व शक्तिमान् ! आप की कृपा से हम लोग परस्पर निष्कपट शुद्धान्तःकरण से धर्म पूर्वक मिल के प्रीति बढ़ावें एक दूसरे की सहायता से धर्म युक्त कार्यों का पालन करें तथा विद्या और धर्म सम्बन्धी बल और शारीरिक बल को परस्पर बढ़ाते रहें। और हम लोगों के तीन प्रकार के (आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक) दुःखों की शान्ति हो जिससे हमलोग सब दुःखोंसे छूटकर मुक्तिको प्राप्तहोवें।

ओं शम् ।

——:*:——

ओ३म्

द्वितीयाध्यायारम्भः ।

❋ बिवाहिता स्त्रियों का धर्म ❋

माताओं तथा बहिनो ! प्रथम इस के कि मैं आप को आप का धर्म बतलाऊं जरूरी मालूम होता है कि मैं आपको बिवाह समय की उन प्रतिज्ञाओं का स्मरण कराऊं जिन को कि आप के प्रातिनिधि प्रोहित जी ने तुम्हारे स्थान में स्वयंही कर लीं थीं अथवा आप ने कीं थीं तो अब उनको भुला कर सुख के स्थान में दुख उठा रही हो। इस लिये पुनः उन पर विचार कीजिये और गृहाश्रम को जो कि नरक धाम बन रहे हैं फिर से स्वर्ग धाम बना दीजिये।

बिवाह के समय बर तथा बधू यज्ञशाला में समस्त उपस्थित विद्वानों के सन्मुख इस वेद मंत्रको पढ़कर इस प्रकार से प्रतिज्ञा करते हैं।

ओं समञ्जन्तु विश्वे देवाः समापो हृदयानि नौ।
सं मातरिश्वा सं धाता समुदेष्ट्री दधातु नौ॥

हे (विश्वे देवाः) यज्ञ शाला में बैठे हुए विद्वान् लोगो !

आप हम दोनों को (समञ्जन्तु) निश्चय करके जाने कि अपनी प्रसन्नता पूर्वक गृहाश्रम में एकत्र रहने के लिये एक दूसरे को स्वीकार करते हैं कि (नौ) हमारे दोनों के (हृदयानि) हृदय (आपः) जल के समान (सम) शान्त और मिले हुये रहेंगे जैसे (मातरिश्वा) प्राण वायु हम को प्रिय है वैसे (सम्) हम दोनों एक दूसरे से सदा प्रसन्न रहेंगे जैसे (धाता) धारण करने हारा परमात्मा सब में (सम्) मिला हुआ सब जगत् को धारण करता है वैसे हम दोनों एक दूसरे का धारण करेंगे जैसे (समुदेष्ट्री) उपदेश करने हारा श्रोताओं से प्रीति करता है वैसे (नौ) हमारे दोनों के आत्मा एक दूसरे के साथ दृढ़ प्रेमको (दधातु) धारण करेंगे।

इस के पश्चात् वर बधू के सन्मुख पश्चिम की ओर मुख करके खड़ा होता है और अपने बायें हाथ में बधू का दाहिना हाथ लेकर और अपना दाहिना हाथ उस पर रख कर निम्न लिखित सात वेद मंत्रों से इस प्रकार प्रतिज्ञा करता है।

ओं गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः। भगो अर्यमा सविता पुरन्धिर्मह्यं त्वादुर्गार्हपत्याय देवाः ॥ १ ॥

हे वरानने ! जैसे मैं (सौभगत्वाय) ऐश्वर्य सुसन्तानादि सौभाग्य की बढ़ती के लिये (ते) तेरे (हस्तम्) हाथ को (गृभ्णामि) ग्रहण करता हूं तू (मया) मुझ (पत्या) पति के साथ (जरदष्टिः) जरावस्था को प्राप्त सुखपूर्वक (आसः)

हो तथा हे वीर ! मैं सौभाग्य की वृद्धिके लिये आप के हस्त को ग्रहण करती हूं आप मुझ पत्नी के साथ वृद्धावस्था पर्यन्त प्रसन्न और अनुकूल रहिये आप को मैं और मुझको आप आज से पति पत्नी भाव करके प्राप्त हुये हैं (भगः) सकल ऐश्वर्य्य युक्त [अर्यमा] न्यायकारी (सविता) सब जगत् की उत्पत्ति का कर्ता (पुरन्धिः) बहुत प्रकार के जगत् का धर्ता परमात्मा और (देवाः) ये सब सभा मंडप में बैठे हुए विद्वान् लोग (गार्हपत्याय) गृहाश्रम कर्म के अनुष्ठान के लिये (त्वा) तुझ को (मह्यम्) मुझे (अदुः) देते हैं आज से मैं आप के हाथ और आप मेरे हाथ विक चुके हैं कभी एक दूसरे का अप्रियाचरण न करेंगे ॥ १ ॥

ओं भगस्ते हस्तमग्रभीत् सविता हस्तमग्रभीत् । पत्नीत्वमसि धर्मणाहं गृहपतिस्तव ॥ २ ॥

हे प्रिये ! (भगः) ऐश्वर्य युक्त मैं (ते) तेरे [हस्तम् हाथ को [अग्रभीत्] ग्रहण कर चुका हूं [त्वम्] तू [धर्मणा] धर्मसे मेरी पत्नी भार्या [असि] है और [अहम्] मैं धर्मसे [तव] तेरा [गृहपतिः] गृहपति हूं हम दोनों मिलके घर के कामों की सिद्धि करें और जो दोनों का अप्रियाचरण व्यभिचार है उसको कभी न करें जिस से घर के सब काम सिद्ध उत्तम सन्तान ऐश्वर्य और सुख की बढ़ती सदा होती रहे ॥ २ ॥

ओं ममेयमस्तु पोष्या मह्यं त्वादाद् बृहस्पतिः ।

मयापत्या प्रजावति शंजीव शरदः शतम् ॥ ३ ॥

हे अनघे ! (बृहस्पतिः) सब जगत् को पालन करने हारे परमात्मा ने जिस (त्वा) तुझको (मह्यम्) मुझे (अदात्) दिया है (इमम्) यही तू जगत् भरमें मेरी (पोष्या) पोषण करने योग्य पत्नी (अस्तु) हो हे (प्रजावति) तू (मयापत्या) मुझ पति के साथ (शतम्) सौ (शरदः) शरदऋतु अर्थात् सौ वर्ष पर्यन्त (शंजीव) सुख पूर्वक जीवन धारण कर। वैसेही बधू भी वरसे प्रतिज्ञा करावे कि हे भद्रवीर ! परमेश्वर की कृपा से आप मुझे प्राप्त हुये हो मेरे लिये आपके बिना इस जगत् में दूसरा पति अर्थात् स्वामी पालन करने हारा सेव्य इष्टदेव कोई नहीं है, न मैं आप से अन्य दूसरे किसी को मांगूंगी। जैसे आप मेरे सिवाय दूसरी किसी स्त्री से प्रीति न करोगे वैसे मैं भी किसी दूसरे पुरुष के साथ प्रीति भाव से न वर्त्ता करूंगी, आप मेरे साथ सौ वर्ष पर्यन्त आनन्द से प्राण धारण कीजिये ॥ ३ ॥

ओं त्वष्टा वासो व्यदधाच्छुभेकं बृहस्पतेः प्रशिषा कवीनाम् । तेनेमां नारीं सविता भगश्च सूर्यामिव परिधत्तां प्रजया ॥ ४ ॥

हे शुभानने ! जैसे (बृहस्पतेः) इस परमात्माकी सृष्टि में और उसकी तथा (कवीनाम्) आप्त विद्वानोंकी (प्रशिषा) शिक्षा से दम्पती होते हैं (त्वष्टा) जैसे विजुली सबको व्याप्त हो रही है वैसे तू मेरी प्रसन्नता के लिये (वासः) सुन्दर

वस्त्र (शुभे) और आभूषण तथा (कम्) मुझ से सुख को प्राप्तहो, इस मेरी और तेरी इच्छा को परमात्मा (व्यदधात्) सिद्ध करें जैसे (सविता) सकल जगत् की उत्पत्ति करने हारा परमात्मा (च) और (भगः) पूर्ण ऐश्वर्ययुक्त (प्रजया) उत्तम प्रजा से (इमाम्) इस तुझ (नारीम्) मुझ नर की स्त्री को (परिधत्ताम्) आच्छादित शोभायुक्त करे । वैसे मैं (तेन) इस सब से (सूर्यामिव) सूर्य की किरणके समान तुझ को वस्त्र और भूषणादि से सुशोभित सदा रक्खूंगा, तथा हे प्रिय ! आप को मैं भी इसी प्रकार सूर्य्य के समान सुशोभित आनन्द अनुकूल प्रियाचरण करके (प्रजया) ऐश्वर्य वस्त्राभूषण आदि से सदा आनन्दित रक्खूंगी ॥ ४ ॥

ओं इन्द्राग्नीद्यावापृथिवीमातरिश्वा मित्रावरुणा भगो अश्विनोभा ! बृहस्पतिर्मरुतो ब्रह्म सोम इमां नारीं प्रजया वर्धयन्तु ॥ ५ ॥

मेरे सम्बन्धी लोगो ! जैसे [इन्द्राग्नी] विजुली और प्रसिद्ध अग्नि [द्यावापृथिवी] सूर्य और भूमि [मातरिश्वा] अन्तरिक्षस्थ वायु [मित्रावरुणा] प्राण और उदान तथा [भगः] ऐश्वर्य [अश्विना] सद्वैद्य और सत्योपदेशक [उभा] दोनों [वृहस्पतिः] श्रेष्ठ न्यायकारी बड़ी प्रजा का पालन करने हारा राजा [महतः] सभ्य मनुष्य [ब्रह्म] सब से बड़ा परमात्मा और [सोमः] चन्द्रमा तथा सोमलतादि औषधी गण सब प्रजाकी वृद्धि और पालन करते हैं

वैसे तुम भी (वर्धयन्तु) बढ़ाया करो,जैसे मैं इस स्त्रीको प्रजा आदि से सदा बढ़ाया करूंगा वैसे स्त्री भी प्रतिज्ञा करे कि मैं भी इस मेरे पति को सदा आनन्द ऐश्वर्य और प्रजा से बढ़ाया करूंगी, जैसे यह दोनों मिल के प्रजा को बढ़ाया करते हैं वैसे तू और मैं मिल के गृहाश्रम के अभ्युदय को बढ़ाया करें ॥ ५ ॥

ओं अहं विष्यामि मयि रूपमस्य वेदादित्पश्यन्मनसा कुलायम् । नस्तेयमद्मि मनसोदमुच्ये स्वयं श्रन्थानो वरुणस्य पाशान् ॥ ६ ॥

हे कल्याणक्रीडे ! जैसे (मनसा) मन से (कुलायम्)कुल की वृद्धि को (पश्यन्) देखता हुआ (अहम्) मैं (अस्याः) इस तेरे [रूपम्] रूपको [विष्यामि] प्रीति से प्राप्त और इस में प्रेम द्वारा व्याप्त होता हूँ वैसे यह तू मेरी बधू [मयि]मुझ में प्रेम से व्याप्त होके अनुकूल व्यवहार को [वेदत्] प्राप्त होवे । जैसे मैं [मनसा] मन से भी इस तुझ बधू के साथ [स्तेयम्] चोरी को [उदमुच्ये] छोड़ देता हूँ और उत्तम पदार्थ का चोरी से [नाद्मि] भोग नहीं करता हूँ [स्वयम्] आप (श्रन्थानः) पुरुषार्थ से शिथिल होकर भी (वरुणस्य) उत्कृष्ट व्यवहार में विघ्नरूप दुर्व्यसनी पुरुष के (पाशान्) बन्धनों को दूर करता रहूँ वैसे (इत्) ही यह बधू भी किया करे इसी प्रकार बधू भी स्वीकार करे कि मैं भी इसी प्रकार आप से वर्त्ता करूंगी ॥ ६ ॥

ओं अमोऽहमस्मिसात्व ᳪ सात्वमस्य मोऽहं सामाहमस्मि ऋक्त्वं द्यौरहं पृथिवी त्वं तावेव विवहावहै सह रेतो दधावहै। प्रजां प्रजनयावहै पुत्रान् विन्दावहै बहून्। ते सन्तु जरदष्टयः सं· प्रियौ रोचिष्णू सुमनस्यमानौ। पश्येमशरदः शतंजीवेमशरदःशत ᳪ शृणुयामशरदःशतम् ७॥

हे वधू जैसे (अहम्) मैं (अमः) ज्ञानवान् ज्ञान पूर्वक तेरा ग्रहण करने वाला (अस्मि) होता हूं वैसे (सा) सो (त्वम्) तू भी ज्ञान पूर्वक मेरा ग्रहण करने हारी [असि] है जैसे [अहम्] मैं अपने पूरण प्रेम से तुझको [अमः] ग्रहण करता हूं वैसे [सा] सो मेरी ग्रहण की हुई [त्वम्] तू मुझ को भी ग्रहण करती है।

[अहम्] मैं [साम] सामवेद के तुल्य प्रशंसित [अस्मि] हूं हे वधू ! तू [ऋक्] ऋग्वेद के तुल्य प्रशंसित है [त्वम्] तू [पृथिवी] पृथिवी के समान गर्भादि गृहाश्रम के व्यवहारों को धारण करने हारी है और मैं [द्यौः] वर्षा करने हारे सूर्य के समान हूं वह तू और मैं [तावेव] दोनों ही [विवहावहै] प्रसन्नतापूर्वक विवाह करें [सह] साथ मिलके [रेतः] वीर्य को [दधावहै] धारण करें [प्रजाम्] उत्तम प्रजा को [प्रजन मा वहै] उत्पन्न करें [बहून्] बहुत [पुत्रान्] पुत्रों को [विन्दावहै] प्राप्त होवें [ते] वे पुत्र

[जरदष्टयः] जरावस्था के अन्त तक जीवनमुक्त [सन्तु] रहें [संप्रियौ] अच्छेप्रकार विचार करते हुये [शतम्] सौ [शरदः] शरद् ऋतु अर्थात् शत वर्ष पर्यन्त आनन्द से [जीवेम] जीते रहें और [शतं, शरदः] सौ वर्ष पर्यन्त प्रिय वचनों को [शृणुयाम] सुनते रहें ॥ ७॥

उपरोक्त मंत्रों द्वारा प्रतिज्ञा के पश्चात् ग्रहबन्धन होके सप्तपदी की विधी होती है तत्पश्चात् वर बधू के हृदय पर अपना दहिना हाथ रखकर इस मंत्र द्वारा इस प्रकार से प्रतिज्ञा करता है।

ओं ममव्रते ते हृदयं दधामि मम चित्त मनु चित्तं ते अस्तु। मम वाचमेकमना जुषस्व प्रजापतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्यम् १

हे वधू! [ते] तेरे [हृदयम्] अन्तः करण और आत्मा को [मम] मेरे [व्रते] कर्म के अनुकूल [दधामि] धारण करता हूं (मम) मेरे [चित्तमनु] चित्त के अनुकूल [ते] तेरा [चित्तम्] चित्त सदा [अस्तु] रहे (मम) मेरी [वाचम्] वाणीको तू [एकमताः] एकाग्र चित्तसे [जुषस्व] सेवन किया कर [प्रजापतिः] प्रजा का पालन करनेवाला परमात्मा [त्वा]तुझ को [मह्यम्] मेरे लिये (नियनक्तु) नियुक्तकरे।

इसी प्रकार से बधू भी अपना दहिना हाथ वर के हृदय पर रखकर ऊपर वाले मंत्र को पढ़ कर कहती है कि—

हे प्रिय वीर स्वामिन्! आपका हृदय आत्मा और अंतः-

करण मेरे प्रियाचरण कर्म में धारण करती हूं मेरे चित्त के अनुकूल आपका चित्त सदा रहे आप एकाग्र होके मेरी वाणी का जो कुछ मैं आप से कहूं उसका सेवन सदा किया कीजिये आज से प्रजापति परमात्मा ने आपको मेरे आधीन किया है जैसे मुझ को आप के आधीन किया है अर्थात् इस प्रतिज्ञा के अनुकूल दोनों वर्ता करें जिससे सर्वदा आनन्दित और कीर्तिमान् पतिव्रता और स्त्रीव्रत होके सब प्रकार के व्यभिचार अप्रियभाषणादि को छोड़के परस्पर प्रीतियुक्त रहें।

इस के बाद वर तथा वधू सभा मंडप के बाहर उत्तर दिशा में जाकर ध्रुव तारा देखते हैं और एक दूसरे का नाम लेकर कहते हैं कि—

हे वधू व वर जैसे यह ध्रुव दृढ़ स्थिर है इसी प्रकार आप और मैं एक दूसरे के प्रियाचरणों में दृढ़ स्थिर रहेंगे।

फिर वर वधू की ओर देखकर बधू के मस्तक पर हाथ धर के कहता है कि—

ओं ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृथिवी ध्रुवं विश्वमिदं जगत्।
ध्रुवासः पर्वता इमे ध्रुवा स्त्री पतिकूले इयम्॥

हे वरानने! जैसे [द्यौः] सूर्य की कान्ति वा विद्युत् [ध्रुवा] सूर्यलोक वा पृथिव्यादि में निश्चल जैसे [पृथिवी] भूमि अपने स्वरूप में [ध्रुवा] स्थिर जैसे [इदम्] यह [विश्वम्] सब [जगत्] संसार प्रवाह स्वरूप में [ध्रुवम्]

स्थिर है जैसे [इमे] यह प्रत्यक्ष [पर्वताः] पहाड़ [ध्रुवासः] अपनी स्थिति में स्थिर हैं वैसे [इयम्] यह तू मेरी [स्त्री] स्त्री [पतिकूले] मेरे कुल में [ध्रुवाः] सदा स्थिर रहे।

इसके उत्तर में स्त्री कहती है कि—

ओं ध्रुवमसि ध्रुवन्त्वा पश्यामि ध्रुवैधि पोष्ये मयि मह्यं त्वादात् । बृहस्पतिर्मया पत्या प्रजावती सं- जीव शरदः शतम् ॥

हे स्वामिन्! जैसे आप मेरे समीप [ध्रुवम्] दृढ़ संकल्प करके स्थिर (असि) हैं या जैसे मैं (त्वा) आपको (ध्रुवम) स्थिर दृढ़ (पश्यामि) देखती हूँ वैसेही सदा के लिये मेरे साथ आप दृढ़ रहियेगा क्योंकि मेरे मन के अनुकूल (त्वा) आपको (बृहस्पतिः) परमात्मा (अदात्) समर्पित कर चुका है वैसे मुझ पत्नी के साथ उत्तम प्रजा युक्त होके (शतं शरदः) सौवर्ष पर्यन्त [सम् जीव] जीविये। फिर पति कहता है कि

हे वरानने पत्नी [पोष्ये] धारण और पालनकरने योग्य [मयि] मुझ पति के निकट [ध्रुवा] स्थिर [एधि] रह [मह्यम्] मुझको अपनी मनसाके अनुकूल तुझे परमात्मा ने दिया तू [मया] मुझ [पत्या] पतिके साथ [प्रजावती] बहुत उत्तम प्रजा युक्त होकर सौ वर्ष पर्यन्त आनन्दपूर्वक जीवन धारण कर।

इन प्रतिज्ञाओंके सिवा स्त्री अग्निको साक्षीदेकर कहती है कि

भर्त्ता सहचरी भूया जीवताऽजीवतापि वा ॥

जब तक इस शरीर में प्राण रहेंगे सदैव दासीके समान सेवा करूंगी, और यही नहीं किन्तु—

भर्त्ता देवो गुरुर्भर्त्ता धर्मतीर्थव्रतानि च।
तस्मात्सर्वं परित्यज्य पतिमेकं समर्चयेत् ॥

पति को ही देवता और पति ही को गुरू समझूंगी संसार के सबही पाखण्डों को छोड़ कर केवल पति सेवाही तीर्थ और व्रत समझूंगी और करूंगी ॥

बस प्यारी बहिनों अब अगर तुम गृहाश्रम को स्वर्गधाम बनाना चाहती हो तो इन प्रतिज्ञाओं को समझ कर विचार कीजिये और इन पर दोनों स्त्री पुरुष मिल कर चलिये तभी कल्याण होगा अन्यथा नहीं क्योंकि मनुजी महाराज कहते हैं कि—

संतुष्टो भार्यया भर्त्ता भर्त्रा भार्या तथैव च।
यस्मिन्नेव कुलेनित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम् ॥
मनु० अ० ३ श्लो० ६०

जिस घर में निरंतर पुरुष तो निज स्त्री से और स्त्री निज पुरुष से प्रसन्न रहती हैं वहां आनंद लक्ष्मी और सौभाग्य का सदा निवास रहता है। और भी कहा है कि—

यत्रानुकूल्य दंपत्योस्त्रिवर्गस्तत्र वर्धते ॥

तीनों वर्ग अर्थात् धर्म, अर्थ और काम का ऐश्वर्य उसी घर में बढ़ता है जहां स्त्री और पुरुष प्रीति भाव से बर्तते हैं।

इन प्रमाणों को छोड़ के नित्य देखने में भी आ रहा है कि जिन स्त्री पुरुषों में स्नेह और मेल मिलाप है वह कैसे आनंद में रहते हैं और दिन दिन उनके घर की शोभा कैसी बढ़ती जाती है, पर जहां हितके बदले बैर और सम्मति की जगह कलह प्रधान है उनके घर सदा दुख ही दुख दिखाई देता है।

इस बिगाड़ की जड़ अधिकांश में स्त्रियां ही होती हैं कारण यह है कि यह पढ़ी लिखी न होने से न अपना धर्म जानती हैं न आचार व्यवहार, और कोई २ तो बुद्धि की ऐसी भ्रष्टा और वाणी की फूहड़ वा स्वभावकी निकम्मी होती हैं (परमात्मा ऐसी स्त्रियों से बचावे) कि बात बात में टेढ़ीं और जब देखो तब रूठी ही रहती हैं। पति बेचारा दिन भर का हारा थका घर में आता है लेकिन इन के मिजाज़ही नहीं मिलते, और बोलती भी हैं तो मानों काटने को दौड़ती हैं, इनके इन्हीं कौतुकों को देखकर पति का चित्त फट जाता है और वह अंतको अपना मन कहीं और बहलाता है या दूसरे शब्दों में मुंह काला करता है यह बैठी कोस्ती कलपती और जन्म भर रोती ही रहती हैं।

इस लिये जो स्त्रियां अपना सुख और भला चाहती हों उनका यह परम कर्त्तव्य है कि वह अपना चलन सुधारें और पतिव्रता के लक्षण धारण करें जैसा कि शास्त्र बतलाता है।

नोच्चैर्वदेन्न पुरुषं न बहून् यत्पुराप्रियान्।
न केनापि विवदेदप्रलाप विलापिनी॥
प्रमादोन्मादरोषेर्षा वञ्चनञ्चाभिमानिता।
पैशून्य हिंसाविद्वेष मोहाहंकार धूर्तता॥
नास्तिकथांसाहसस्तेय दम्भान्साध्वीविवर्ज्जयेत्

अर्थ—चिल्ला के न बोलें, कड़वी और अप्रिय बात भी पति को कभी न कहें, किसी से लड़ाई झगड़ा न करें, व्यर्थ न बकें न रोयें धोयें, प्रमाद, उन्माद, क्रोध, ईर्षा, कपट, अभिमान, चुगली, हिंसा, द्वेष, मोह, अहंकार, धूर्तता, नास्तिक्य दुःसाहस, चोरी, और छल, जो यह १६ दोष हैं इन के पास न फटकें।

जिस स्त्री में इस तरह का एक दोष भी होता है वह सदा दुख उठाती और नष्ट हो जाती है, जो कोई यह कहे कि ऊंचा बोलने या क्रोध में कोई कड़ी बात निकल जावे तो कोई बुराई नहींहै जहां चार बासन रहतेहैं खट्ट पट्ट होती ही रहती है, तो सुन लो विगाड़ इस में यह होता है कि जो बर्तन आपस में खटकते रहतेहैं शीघ्रही फूट जातेहैं, यह बातें लड़ाई की जड़ हैं और कठोर बोलना तो इतना बड़ा कुलक्षण है कि मनुस्मृति में ऐसे स्वभाव वाली स्त्री के साथ विवाह करना मना किया है। और स्कंदपुराण में लिखा है कि:—

उक्ता प्रत्युत्तरं दद्यात् या नारी क्रोध तत्परा।

साशुनी जायते ग्रामे शृगाली निर्जने वने ॥

अर्थात् जो स्त्री पति की बात का जला कटा उत्तर देती है वह दूसरे जन्म में गांव की कुतिया, और जो क्रोध करती है वह बनकी सियारनी होती है।

किन्ही २ स्त्रियों की यह आदत भी होती है कि वैसे तो कुछ नहीं बोलतीं लेकिन जब बाहर की कोई स्त्री बैठी होती हैं तौ यह जताने के लिये कि वह अपनी ही बात सिरे रखती हैं अदबदा के स्वामी की बात काटती मचलती ताने मारती नाक भौं चढ़ाती और अनेक प्रकार से निरादर व अपमान करती है, इस पर जो कहीं वह भी ऊत के ऊतही हुये तो बस फिर क्या था............जो दशा होती है उसे आप स्वयंही जानती हैं और जो समझदार और ग़मखोर हुआ तो हँस के टाल जाता है पर यूंही बढ़ते २ मन में मैल पड़ जाता है और अन्तको स्त्री जी से उतर जाती है।

स्त्री को चाहिये कि शील स्वभाव रक्खे सदा नम्रता के साथ और हँस के मीठा बोले, हित व स्नेह की बातें करे और अपने स्वामी के मन को हाथ में लिये रहे, कहा है कि सुख जबही प्राप्त होता है।

प्रियच भार्य्या प्रियवादिनी च।

जब भार्या हँसमुख और मधुर बोलने वाली मिलती है और लिखा है कि—

या हृष्ट मानसा नित्यं स्यान मान विचक्षणा।

भर्तुः प्रीति करी नित्यं सा भार्य्या हितराजरा ॥

जो स्त्री सदा प्रसन्न रहती, हर्ष के साथ अपने पति की मर्यादा रखती, मान बढ़ाती, और जीसे प्रीति करती है वह यथार्थ भार्या है अन्य सब व्यर्थ हैं।

और पतिव्रता के धर्म भी यही वर्णन किये हैं कि—

मनो वा कर्म्मभिश्शुद्धाः पतिदेशानुवर्तिनी।
छायेवानुगता स्वेच्छा सखीव हितकर्मसु ॥

अर्थात्–मन की निर्मल बाणी की प्रिय बात की सच्ची और आचार की शुद्ध होये पति की आज्ञा में चले छायाकी तरह उसके साथ रहे और सखी की नाईं उसके हित का साधन करे। मनुस्मृति का वचन है—

विशालः कामवृत्तो वा गुणैर्वा परिवर्जितः।
उपचर्य्यः स्त्रिया साध्व्या सततन्देववत्पतिः॥

शील से रहित पतिहो किम्बा गुणों से वर्जित अथवा दूसरी स्त्रीसे प्रेम रखता हो तो भी पतिव्रता को यही उचित है कि देवताही के समान उसको समझे।

स्त्रीभिर्भर्तृवचः कार्यमेषधर्मः परः स्त्रियाः।
आशुद्धेः संप्रतीक्ष्योहि महापातक दूषितः॥

भर्ता का कहा मानना स्त्री अपना परम धर्म समझे चाहे वह दोषों से भरा ही हो तो भी उसी के आधीन रहे।

रामायण में भी कहा है कि—

अमित दान भर्ता वैदेही।
अधम सो नारि जो सेव न तेही॥
वृद्ध रोगवश जड़ धनहीना।
अंध वधिर क्रोधी अतिदीना॥
ऐसेहु पतिको किये अपमाना।
नारि पाव यमपुर दुखनाना॥

इन नीतियों पर जो कोई स्त्री यह तर्क कर बैठे कि शास्त्र वालों ने तो पूरी लौंडी बनाया और महा अन्याय दिखाया है पुरुष अच्छा न हो तो क्यों स्त्री उसके पीछे फिरे। तो यह तर्क करने वालों की भूल है शास्त्र ने उसको लौंडी नहीं बनाया किन्तु पुरुष को गुलाम बना रखने का उपाय बताया है क्यों कि शुद्ध आचार और भक्ति से तो परमेश्वर भी वश हो जाता है मनुष्य का बशी हो जाना क्या बड़ी बात है। जब स्त्री यूं तन मन से प्रीति करेगी तो वह भी अवश्य ही उसका हो रहेगा दूसरे यह भी स्त्री का लाभ है कि ऐसे बर्ताव से प्रीति में रूक्षता पड़ने नहीं पाती और सुहाग उस का बना रहता है, नहीं तो पति की रुचि हटी और शोभा इसकी मिटी, तीसरा गुण यह है कि न पुरुष कहीं अटकता और न स्त्री का मन बिचलता है, चौथे पति के व्यभिचार में पड़ने से जो धन बाहर जाता वह बच रहता है जो उसके

और उसी की सन्तान के काम आता है, और सब से बड़ा पांचवां लाभ यह है कि ऐसे आचार से स्त्री का परलोक भी सुधरता है। देखो मिताक्षरा श्लोक ८७

पतिप्रियहितेयुक्ता स्वाचारा विजितेन्द्रिया।
सेहकीर्तिमवाप्नोति प्रेत्यचानुत्तमांगतिम्॥

जो स्त्री पति से प्रीति करती उस के हित में लगी रहती और अच्छे आचार और इन्द्रियों को बश में रखती है वह संसार में सुकीर्ति और परलोक में उत्तम गति पाती है। और देखो मनु अ० ५ श्लो० १६५ में कहा है किः—

पतिं या नाभिचरति मनो वाग्देह संयता।
साभर्तृलोकमाप्नोति सद्भिःसाध्वीति चोच्यते॥

अर्थात्—मन बाणी देह से जो पति को दुखित नहीं करती, वह पति लोक को प्राप्त होती है और अच्छे पुरुष उसको साध्वी कहते हैं और ऐसी ही स्त्रियों को लक्ष्मी कहा है, देखो अगला श्लोक।

अनुकूला न वाग्दुष्टा दक्षा साध्वी पतिव्रता।
एभिरेव गुणैर्युक्ता श्रीरेव स्त्री न संशयः॥

जिस स्त्री में यह गुण होते हैं कि अपने पति की आज्ञानुसार चलती कभी कड़वी बात नहीं कहती घर के कामों को अच्छी तरह देखती सदाचारी और पतिव्रता होती वह

साक्षात् लक्ष्मी स्वरूप है। ऐसा ही भविष्य पुराण में कहा है कि हँसमुख, आज्ञानुसारी और हितकारी भार्या देवी समान है परमेश्वर उस पर सदा प्रसन्न रहता है और प्रार्थना उसकी सदा पूरण करता है।

कर्म तीन प्रकार के होते हैं, मानसिक, वाचिक, और कायिक इसी हेतु से पति सेवा भी तीन प्रकार से की जाती है, प्रेम करना, मन में कभी भी पति की तरफ से कुचेष्टा न करना मानसिक सेवाहै, नम्रता और स्नेहकेसाथ प्रियबोलना वाचिक और शारीरिक सुख देना किसी प्रकार का कष्ट न पहुंचाना कायिक सेवा कहाती है। सर्व स्त्रियों का यह परम धर्म है कि इन तीनों प्रकार की सेवा में सदैव तत्पर बनी रहें अर्थात् हमेशा उसके हित की सोचें, प्रेम में चूर व मग्नरहें और जी से उसे प्रसन्न रक्खें, सदा प्रीति व नीति के साथ मधुर बोलें कड़ी बात मुँह से न निकालें, क्रोध में देखें तो चुप हो रहें, जब शांत होवें बड़ी नम्रता से जो पूछना हो पूछें, कभी बात न काटें न ज़बान लड़ायें, झूठ न कहें बकवाद न करें, उसके सुखकी जितनी सामग्रीहो सबको एकत्र रक्खें, उसके सोने से पीछे सोयें, उठने से पहिले उठें जो २ पदार्थ जिस २ समय के लिये चाहिये पहले से इकट्ठी कर दें, रुचि का भोजन बनायें, ठीक समय पर अत्यन्त प्रीति और आदर के साथ जिमावें, शयन के समय बिनोद से उस के चित्त को प्रफुल्लित करें किसी बात में हठ न करें, न किसी वस्तु के वास्ते सतायें उस को कोई दुख हो तो आप भी दुख मानें, कोई विपति आजाय तो आप धीर रहें और उस को ढांढ़स बँधावें, क्लेश में क्लेश न बढ़ावें, सलाह से सब काम

करें, बिना आज्ञा कहीं घर से बाहर न जावें, न पर पुरुष पर आंख उठावें, खिड़की झरोखे कभी न झाकें, इस से सती धर्म में बाधा आती है।

पतिव्रता के वास्ते तन मन से पति की सेवा में लगी रहना यही एक नियम, और अति स्नेह और प्रीति उस की भक्ति करना यही एक महा धर्म, शास्त्रकारों ने निर्णय किया है इस से बिपरीत जो नेम धर्म आज कल स्त्रियां बघारती हैं वह सब अनर्थ हैं उन को इतना तो ज्ञान ही नहीं कि नियम कहते किस को हैं और धर्म किसका नाम है हां इस का बड़ा बिचार है कि छरछोबी जाने में देह पर वस्त्र न हों, बिना नहाये कोई वस्तु न छूजाये, रसोई में ऊनी या धोई फींची धोती रहे चौका पति भी छू दें तो भ्रष्ट हो जाय, बस इसी छुआ छूत को नेम समझती हैं और गंगा यमुना नहाना आधी २ रात से कार्तिक स्नान को जाना, दो दो पहर यात्रा और कथा में गँवाना घंटा हिलाना, गर्भिणी और बच्चे वाली हो कर भी ब्रत उपवास करना, सूप चलनी पूजना, मीयां पीर मनाना धर्म जानती हैं इस की खबर ही नहीं कि इन कर्मों से सतीपन भंग होता है, पत उतरती, धन नष्ट होता और धर्म में बट्टा लगता है। कारण इस का आगे खुल जाय गा, यहां पहले नियम और धर्म के अर्थ सुन लीजिये।

नियम शब्द के अर्थ हैं बुरे बिचारों को रोकना मन को बश में रखना, अच्छी प्रकृति रखना, दुष्ट कर्मों को छोड़ना और अपने प्रण पर स्थिर रहना।

धर्म सदाचार को कहते हैं अर्थात् अच्छे चलन चलना

भला बुरा बिचारना भलाई करना, बुराई के पास न जाना और मर्यादा से रहना । अब जरा सोचिये कि स्त्री को बुरे कामों से हटकर पति के चरणों में स्थिर रहने और "भर्ता सहचरी भूया जीवताऽजीवतापि वा" वाली प्रतिज्ञा के निर्वाह निमित्त तन मन से सेवा टहल करने का नियम साधना योग्य है, या उस का छुआ तक न खाना और पाखंड ढकोसले करना । इसी तरह यह भी विचारिये कि स्त्री का दो दो पहर बाहर रहना, रात को घर से निकलना, भीड़ में जाना मेलोंमें फिरना, हज़ारों मर्दोंकेबीचमें नहाना, और उघारी होना यह सब अच्छे चलन हैं या बुरे. और जब नहाते और धोती बांधते समय लुच्चे घूरते और अंग अंग निहारते शुहदे आवाज़ कस्ते और ठट्ठे लगाते, भीड़ में बदमाश धक्के देते, कुहनी मारते. ठौर कुठौर हाथ चलाते और चोर उचक्के नाक कान नोचते हैं तो लाज जाती और पति उतरती है कि नहीं?

फिर शास्त्र तो निषेध करे कि किसी पर पुरुष की परछांहीं भी न पड़ जाय, घर के अन्दर भी कोठरी के किवाड़ बंद करके नहाये, पति भी नग्न न देख पाये, और स्त्री हजारों को यूं अपना अंग २ दिखलाये, कहिये ! यह धर्म है या अधर्म ? और जिस मर्यादा के वास्ते कहा है कि तन धन सब कुछ देकर भी बचे तो बचाना चाहिये, वह यों गंवाई जाये तो यह तरने के लक्षण हैं या डूबने के । इन दोषों को विचार कर गंगा महारानी को घर बैठे दंडवत कीजिये, और धन पतिव्रत, और धर्म जो अमूल्य पदार्थ हैं भेंट न दीजिये, और अपने इस प्रण को याद कीजिये ।

भर्तादेवो गुरुर्भर्ता धर्मतीर्थव्रतानि च ।
तस्मात्सर्वं परित्यज्य पतिमेकं समर्चयेत् ॥

देवी देवता सब कुछ अपने प्राणपतिही को समझिये जैसा कि शास्त्र भी कहताहै, कि "नारिधर्म पतिदेव न दूजा"

नास्ति स्त्रीणां पृथग्यज्ञो न व्रतं नाप्युपोषितम् ।
पतिं शुश्रूषते येन तेन स्वर्गे महीयते॥मनु-५-१५५

यज्ञ व्रत पूजा इत्यादि स्त्रियोंके लिये अलग नहीं हैं केवल पतिकी सेवा सेही उनको स्वर्ग और बड़ाई मिलती है । जिन पुराणों की आज्ञासे आप एकादशी इत्यादि में उपवासकरके भूखों मरतीहो उन्हीं पुराणों में कहा है, देखो वामन पुराण।

पद्माक्षं धारयेन्नित्यं न च तुलसी मालिकं ।
यः कोपि च भवेद्भर्त्ता तं देवमिव पूजयेत् ॥
स्थिते भर्तरि या नारी उपोष्य व्रतमाचरेत् ।
आयुष्यं बाधते भर्त्तुः सा नारी नरकं व्रजेत् ॥

स्त्रियों का देवता उनका पति है, उसी की पूजनकरें और उसकी प्रसन्नता के वास्ते कमल आदि की माला पहिरें। तुलसी की माला धारणकरना उन्हें निषेध और व्रत उपवास करना महा दोष है, क्योंकि उसके प्रभाव से पति की आयु क्षीण होती और इस दोष से स्त्री को नरक प्राप्त होता है ।

ऐसाही मनुजी ने भी कहा है कि:—

पत्यौ जीवति यातु स्त्री उपवासं व्रतं चरेत् ।
आयुष्यं बाधते भर्त्तुर्नरकं चैव गच्छति ॥

अर्थ—जो स्त्री पतिके जीवते भूखी रहनेवाला व्रत करती है वह पति की आयु को बाधा पहुँचाती और आप नरकको जाती है। इस लिये इन सब पाखंडों को छोड़कर केवल पति की सेवामें रहिये और निश्चय लाइये कि स्त्री के वास्ते यही एक कल्याण का मार्ग है। जैसा कि गुसाईं तुलसी दास जी ने भी कहा है।

एकै धर्म एक व्रत नेमा।
काय बचन मन पतिपद प्रेमा॥

स्त्री कभी अपने आप को स्वतंत्र भी न होवे, बूढ़ी भी होजाय तो भी पति पुत्र घर के छोटे बड़ों के कहने में रहे और सब की सलाह में चले।

बाल्यया वा युवत्या वा वृद्धया वापि योषिता ।
न स्वातंत्र्येण कर्त्तव्यं किञ्चित्कार्यंगृहेष्वपि ॥
बाल्ये पितुर्वशे तिष्ठेत्पाणिग्राहस्य यौवने ।
पुत्राणां भर्त्तरिप्रेते न भजेत् स्त्री स्वतन्त्रताम् ॥
पित्रा भर्त्रा सुतैर्वापि नेच्छेद्विरहमात्मनः ।
एषां हि विरहेण स्त्री गर्ह्यं कुर्य्यादुभे कुले ॥
मनु० अ० ५ श्लो० १४७-१४८-१४९

अर्थ-स्त्री बाला हो चाहे युवा बूढ़ी हो या किसी तरहकी कभी स्वतन्त्र न रहे न कोई काम अपने मनका करे, बालपन में पिता की आज्ञा में रहे, युवावस्था में पति के वश, और बिधवा भये पर पुत्रों के आधीन, जो पुत्र न हों तो पति के नातेदार, वह भी न हों तो पिता के सम्बांधियों की सलाह माने, पिता भर्ता पुत्र इनसे कभी अलग न रहे, इनके बियोग से स्त्री दोनों कुल को निन्दित करती है, इसलिये सज्जन स्त्रियोंको चाहिये कि इस नीति को अपनी गांठ बांधें।

बालभाव जब तक रहै नारी।
तब तक पितु आज्ञा अनुसारी॥
होय स्यानि तब करे पति सेवा।
ताको समझ लेइ निज देवा॥
मन प्रसन्न राखे सब छिन में।
आलस नींद ग्रसे नहीं तन में॥
होवे गेह काज में दच्छा।
करे सदा धन सम्पति रच्छा॥
सब पदार्थ को रहे बनाये।
रात दिवस देखे मन भाये॥

———

❀ गृहस्थ धर्म्म ❀

गृहस्थी का सारा बोझ भी जो कि औरतों ही के सिर है, इस लिये पहले अच्छी तरह से समझ लो कि यह क्या पदार्थ है।

देखो मनुष्य की तीन अवस्था हैं बालपन जवानी और बुढ़ापा, इन तीनों के लिये तीन आश्रम अर्थात् तीन अलग २ काम बना दिये गये हैं बाल अवस्थाका काम है विद्योपार्ज्जन और वेद व शास्त्रों का अध्ययन करना और गुणोंको सीखना इस कर्म का नाम ब्रह्मचर्य्य है। विधिपूर्वक बिबाह से संयुक्त होकर सृष्टि की उन्नति करना, लोक और परलोक के व्यवहारों में नीति के साथ प्रवृत्ति होना, मर्यादासे चलना, अच्छे कर्म और सब की भलाई और सहायता करते रहना, मान अपमान सब सहना, धन और धर्म को बढ़ाना, और परमात्मा का स्मरण रखना, यह सब युवा अवस्था के कर्म हैं और इन्हीं का नाम गृहस्थाश्रम है।

पुत्र पौत्र धन दौलत जब मिल जाये तब संतुष्ट हो के केवल सच्चिदानन्द से लौ लगाना माया मोह को त्यागना और शरीर का नाशवान समझना यह बुढ़ापे का काम है और इसी कृति को बानप्रस्थ और सन्यास कहते हैं सो उस का समय अभी बहुत दूर है इस वक्त तो अभी गृहस्थी से काम है उसके हर पद को विचार लीजिये।

देखिये पहले तो यह गृहस्थ शब्द अपने स्वरूप से यह बतला रहा है कि जैसे वह अकेला नहीं किन्तु गृह और स्थ

दो पदों से संयुक्त है वैसेही आप भी अपने पुरुष के साथ दृढ़ प्रेम से स्थित रहिये, दूसरे जो अर्थ उसमें हैं वही आप भी धारण कीजिये, अर्थात् गृह के अर्थ हैं, घर, पकड़ना, बटोरना, इकट्ठा करना, उठाना सहना, और स्थके अर्थ स्थिर होना, दृढ़ रहना. इन सबको मिलाके यह अर्थ हुये कि घर में अपने स्थिर रहो, स्वामी को दृढ़ प्रीति से पकड़ो, धर्म और धन बटोरो, कुटुम्ब को एकत्र रक्खो, आप कष्ट उठाओ परन्तु दूसरे को दुख न दो अतिथि अभ्यागत सबका आदर सत्कार करो, विपति कालमें जैसी पड़े सहो, धर्म धीर्य और सन्तोष को कभी न छोड़ो, बस इसी मिल जुल के रहने का नाम गृहस्थ है, और मर्यादा से चलना, दुख दर्द में सब के काम आना, उपकार करना, अपकार के समीप न जाना और धन व धर्म वृद्धि में पुरुषार्थ रखना इसी का नाम धर्म है। अब इसके चलाने की नीति और रीति जो शास्त्र बताता है पहले वह सुनिये।

अहिंसा सत्य मस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
दानं दमोदया शांतिः सर्वेषां धर्मसाधनम्॥मनु०

अर्थ-किसी को पीड़ा न दो, सदा सच बोलो, पराई चीज न छूओ, शरीर और चित्त शुद्ध और इन्द्रियों को वश में रक्खो, दीनों को दान दो, मन को मारे रहो, सबपर दया करो, और सन्तोष को कभी न छोड़ो।

वयो बुद्ध्यर्थवाग्वेषः श्रुताभिजन कर्मणाम्।
आचरेत् सदृशी वृत्तिमजिह्माम शठां तथा॥मनु०

अर्थ-अवस्था, बुद्धि, अर्थ, वाक, भेष, पुरषार्थ कुलाचार, और मर्याद इन आठों के सदृश सब काम करो, अर्थात् अपनी अवस्था और बुद्धि के अनुसार चलो, जो योग्य न हो, या जो समझ में न आवे उस काम में हाथ न डालो हर काम के प्रयोजन को पहले अच्छी तरह सोच विचार लो, बिना समझी बात न कहो, कुल की अच्छी रीति न छोड़ो और मर्याद के साथ सब काम करो ।

सदा प्रहृष्टया भाव्यं गृहकार्येषु दक्षया ।
सुसंस्कृतोपस्करया व्यये चामुक्तहस्तया ॥
मनु० ५-१५०

अर्थ-सर्वदा प्रसन्न चित और घरके कामों में चतुर तथा घर के बर्त्तन भांड़े ठीक करके रक्खे और व्यय करने में स्त्री सर्वदा हाथ सकोड़े रहे ।

धीमा मधुर और हंसमुख स्वभाव होने से बड़ी सराहना होती, अपने पराये सब प्रीति करते और काम काज में हाथ बटाये रहते हैं, झल्ले तीखे भोंड़े स्वभाव वाले को कोई मुंह नहीं लगाता और पास फटकने नहीं देता है। प्रसन्न बदन रहने से काम में चित्त लगता और हर्ष तथा उमंग बढ़ता उदास और कुढ़ते रहने से आलस बढ़ता और किसी काम को जी नहीं चाहता है ।

सोच विचार और चतुराई से न बर्तन में एकतो काम बिगड़ता और ऊपर से हंसी होती है, इस लिये जो काम

करे पहले ऊँच नीच सब सोंच ले, जल्दी कभी न करे, किसी काम में कोई उलझन या कठिनता देख पड़े तो घबड़ा न जाय, और न हिम्मत हारे सावधानी के साथ चित्त लगा के करे कोई काम ऐसा नहीं जो मन लगा के करने से न हो सके । अपना काम दूसरे के भरोसे पर भी न छोड़े किन्तु आप करे, अपने असबाब की भी देख भाल और संभाल अच्छी प्रकार न रखने से नुकसान भी होता और वक्त पर दुख उठाना पड़ता है । हाथ खुला रखने और वृथा खर्च करने से तो गृहस्थी कभी बंधने नहीं पाती और नित्य मुहताजी खड़ी रहती है, जितनी चादर देखे उतना पैर फैलाये हैसियत से ज्यादा न बढ़े समय को देख विचार के चले ।

इन सब नीति और रीति पर ध्यान रखके स्त्रियों को चाहिये कि आलस्य और उतावली छोड़ कर सावधानी और चतुराई के साथ हर्ष और उमंग से सब कामों को करें, बड़े सवेरे पति और सासु ससुर के उठने से पहले सोके उठें, शौच हो स्नान कर प्रथम जगदीश्वर का चिन्तन और स्तुति प्रार्थना करें, फिर सासु ससुर के चरण स्पर्श और पति को प्रणाम करके घर के धंधे स्वामी और बड़ों की इच्छानुसार देखें, जो काम चाकरों से लेने के हैं, उन से लें जो अपने करने के हैं आप करें, भोजन बनायें, बड़े छोटे हित मित्र सम्बन्धी आदि जो गृह में हों सब को सत्कार से खिलायें, फिर नौकरों तक को देकर अपने स्वामी को भोजन करायें और आप खायें ।

यहां पर जो कोई यह तर्क करे कि यह कैसी अनरीति है कि

स्वामी तो पीछे खायें और नौकर पहले, घर के मालिक को तो सब से पहले खाना चाहिये,तो उत्तर यह है कि प्रथम तो मालिक का धर्म है कि जो २ उस के आधीन हैं पहले उन का सुख देखे, दूसरे जो यह खालेगा रसोई उठा डाली जायगी, और उस समय कोई अतिथि आगया तो निराश जायगा, और पाहुन [महमान] आया तो लज्जित भी होना पड़ेगा, फिर से भी रसोई बनवाई तो देर होगी, और कदाचित्त कोई सामग्री घरमें न हुई तो और भी कठिनता पड़ेगी, इसलिये उसको सबसे पीछे और आने जाने वालोंका विशेष कर रास्ता देख के खाना चाहिये और यही धर्मशास्त्र का भी लेख है।

बाल स्वासिनी बृद्ध गर्भिण्यातुर कन्यकाः ।
संभोज्यातिथिभृत्यांश्च दंपत्योः शेष भोजनं ॥

अर्थात् बालक, बिवाही लड़की, बूढ़ा, गर्भिणी, आतुर, कन्या, अतिथि, नौकर चाकर सब को खिला के जो बचे स्त्री पुरुष खावें।

भोजन के पीछे धरने उठाने से छुट्टी करके कपड़े बदलें शृंगार करें, फिर जो और कार्य और व्यवहार हों उन को विचार के साथ देखें और कामों से सावकाश निकाल के चिट्ठी पत्री कहीं भेजनी हो तो वह लिखें, कुछ चित्र बनाना जानती हों तो बनावें, नहीं तो सीखें, सुई का काम करें, और थोड़ी देर ज्ञान उपदेश नीति और वृत्तान्त की पुस्तकें पढ़ें और सुनें।

संध्या समय फिर दिन की तरह सबको खिलावें पिलावें और आये गये का आदर सन्मान करके दिन भर के खर्च का हिसाब लिख डालें, और सब धंधों से छुट्टी कर और यह देख के कि घर के बड़े सोने जा चुके अपने स्वामी की सेवा में जावें।

पति विदेश।

क्रीडां शरीरसंस्कारं समाजोत्सव दर्शनम्।
हास्यंपरगृहेयानंत्यजेत्प्रोषितभर्तृका।मि.श्लो०८४

जब पति बिदेश में हों तो लिखा है कि खेल, शृंगार, समाज और उत्सव में जाना, हंसी ठट्ठा करना और दूसरे के घर रात में न रहे। स्वामी का स्मरण हरदम मन में रक्खे, और अपना समय गृहस्थीके धंधे, सीने परोने, लिखने, पढ़ने और धर्म चर्चा में काटें, निकम्मी कभी न बैठें, ऐसा ही शास्त्र बचन है।

विद्याभ्यासनं चित्रादि कर्म्मण परिपालनम।
वहितं सावकाशेन स्त्रिया चलन चेतसः॥

निकम्में बैठने से चित्त चलायमान रहताहै इससे चाहिये कि स्त्री लिखने पढ़ने चित्र आदि बनाने और तरह २ के धंधों में लगी रहे। और ऐसी दशा में यदि खर्च कम हो जाये तो स्त्री शिल्प विद्या के द्वारा अपना निर्वाह करे दुष्ट और नीच कर्म के कभी पास न जाये।

सासु ससुर की सेवा और कुटुम्बियों से प्रीति।

स्त्रियों का बहुत बड़ा धर्म यह भी है कि सासु ससुरको माता पिता के समान जानैं नित्य सवेरे सांझ उन को प्रणाम करें, आज्ञा और भय मानें इच्छा अनुसार चलें जो कहें वही करें और सेवा बन्दना में लगी रहें। रामायण में कहा है।

एहिते अधिक धर्म नाहिं दूजा।
सादर सासु ससुर पद पूजा॥

ऐसा ही मनुस्मृति में भी लिखा है मनु॰ २—१२२

अभिवादन शीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्यायशोबलम्॥

जो बड़ों को नित्य प्रणाम करते हैं और उनकी सेवा में लगे रहते हैं उनकी आयु, विद्या, यश और बल चारों चीजें बढ़ती हैं।

इसी प्रकार जेठ जिठानी आदि सब बड़ों की मर्य्याद माने, आदर सन्मान करें, देवर, देवरानी, नन्द, बालक, इत्यादि छोटों पर दया और प्रीति रक्खें, और सब कुटुम्बी और नातेदारों का यथायोग्य सत्कार करें और निम्न लिखित चौपाई की नीति पर चलें।

मात पितासम सासु ससुर में।
कीजे भाव जाय पतिपुर में॥
सेवा विधि मर्याद समेता।
नारि धर्म कह बुद्धि निकेता।
अति आदर कर जेठ जिठानी।
बालक सम देखत धौरानी॥
बहिन समान ननद को जानहु।
शुद्ध भाव सबही में आनहु॥
सब की सेवा पति के नाता।
दर्शावहु गुण गण की बाता॥

सब के साथ प्रेमसे बर्तें, प्रिय बचन बोलें, निव कर चलें, बैर बिरोध न रक्खें, मर्जी और सलाह से काम करें, यह नहीं कि जो जीमें आया वही कर उठाया, किसीने एक कही तो सौ सुनाई, सासु बोली तो मुँह नोच लिया, डोली से उतरीं और चूलहा अलग तपाया, इन भोड़ी बातों को कभी न करना गृहस्थीका मुख्य धर्म है कि परस्पर प्रीतिकी वृद्धि हो, एका रहे और अपना पराया जान न पड़े। वेद की श्रुति है कि—

सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमिवः।
अन्यो अन्यमभिहर्यत वत्सं जातमिवा धन्या॥

अर्थ–जैसे गाय अपने उत्पन्न हुये बछड़े को चूमती है वैसेही तुम भी बैर बिरोध छोड़कर एक दूसरे से प्रीतिपूर्वक व्यवहार करो ।

येन देवान वियन्ति नोच विद्विषतेमिथः ।
तत्कृरामो ब्रह्मत्रो गृहे संज्ञानं पुरुषेभ्यः ॥

अर्थ–जिस तरह देवता सब पर अनुकूल रहते और द्वेष भाव नहीं रखते हैं उसी तरह तुम गृहस्थी के लोग परस्पर प्रेम प्रीति से वर्तो और अपने ऐश्वर्य को बढ़ाओ ।

समानीप्रपासहवोऽन्नभागः समानेमोक्केसहवो
युनज्मिसत्यञ्चोऽग्निसपर्यताराना भिमिवाभितः

अर्थ–हे गृहस्थी लोगो ! तुम अपना जलपान खाना पीना सवारी आदि व्यवहार सब एक में रक्खो और जैसे चक्र के आरे चारों ओर से बीच की नाल में लगे रहते हैं, अथवा जैसे यज्ञ के करने और कराने वाले मिलकर अग्नि के सेवन से जगत का उपकार करते हैं वैसे ही तुम सब मिलकर हित व्यवहार करो ।

आपस में मेल मिलाप और सुमति रखने से घर की शोभा बढ़ती, धन सम्पति की वृद्धि होती, और जग में बड़ाई मिलती है । और बिवाद मचाने से लाख का घर खाक में मिलता और धन धर्म सब नाश होजाता है । कहा है—

जहां सुमति तहँ सम्पति नाना ।

जहां कुमति तहँ बिपति निदाना ॥

घरके बड़े, बांधव और सम्बन्धियों से लड़ने झगड़ने में बुरा फल तो मिलताही है, परन्तु मनुस्मृति में तो दासवर्ग तक से बैर विवाद रखने में परलोक बिगड़ना लिखा है, और प्रीति बनी रखने के वास्ते शास्त्रकारों ने यहां तक कहा है कि सम्बन्धी और प्रेमियों से जिन का आना जाना बहुत न हो सक्ता हो तो साल में एक बार अवश्यही मिले, जिस में स्नेह में रुक्षता न पड़ने पावे।

इस लिये स्त्री को चाहिये कि मिळनसारी और नम्रता सीखे, बड़े छोटे सब से स्नेह करे, एका और सम्मति रक्खे, फूट घर में न आने दे, सब का कहा माने, कोई टेढ़ा भी हो तो आप सीधी रहे, कोई कितना ही क्रोध करे आप माथे पर बल न पड़ने दे। अपना दोष हो तो लजाये, मन को मारे, क्रोध को रोके, जबान की मीठी, बात की सच्ची, और हाथ की साफ़ रहे, छल कपट लगाई बुझाई कुछ न करे, छिछोरा और लुत्नापन छोड़ दे, गम्भीर बने और इस नीति पर ध्यान रक्खे, कि—

तुलसी इस संसार में, चार वस्तु हैं सार।
सत्य वचन, आधीनता, हरि सुमिरन उपकार॥

❀ अतिथि सत्कार ❀

आये गये का सन्मान करना भी अति आवश्यक है, जो

अपने घर में आवे वृद्ध हो तो उठ के प्रणाम करे, आदर से बैठाये, यथाशक्ति सेवा करे और जब जाने लगे तब थोड़ी दूर तक उसे पहुंचा आये, इसी प्रकार बराबर वाले और छोटों का भी यथायोग्य आदर करे और जो अपने में कुछ सेवा की सामर्थ्य नहो तो।

तृणानि भूमिरुदकं वाक्चतुर्थी च सूनृता।

चटाई, भूमि, जल, और मीठे बोल से ही अतिथि सत्कार करे। अपने घर में छोटे से छोटा और वैरी से बैरी आवे तो उस को भी उठ के आदर से ले, सत्कार से बैठाये, हित से बोले, और इस नीति पर चले—

आवे घर कुल कोई नारी।
लेहु स्नेह प्रीति कर भारी॥
विनय सहित पूछहु कुशलाता।
करहु स्नेह प्रेम रस बाता॥

अपने आप को सदैव सब से छोटा जाने कभी किसी से गर्व की बात न कहे, अड़ोसी पड़ोसी सबसे हेल मेल रक्खे दुख दर्द में सब का साथ दे, कोई कुछ कड़ी भी कहे तो सह ले मन में मैल तक न लावे और भलाई करने से मुँह न मोड़े आप कष्ट उठाये दूसरे को दुख न दे, उपकार करे अपकार के पास न जाये। मनुस्मृति का वाक्य है—

नारुन्तुदः स्यादार्तोऽपि न परद्रोहकर्म्मधीः।
ययास्योद्विजतेवाचा नालोक्यान्तामुदीरयेत्॥
मनु० २, १६१.

अर्थ—अपने को दुख भी पहुंचता हो तौ भी दूसरे को क्लेश देना, मनमें किसी से द्रोह रखना और ऐसी बात कहना जिस से किसी को खेद हो, कदापि योग्य नहीं, क्यों कि इसमें अपनी ही हानि है।

यथैवात्मा परस्तद्वत् द्दष्टव्याः शुभमिच्छता।
सुख दुःखानि तुल्यानि यथात्मनि तथापरे॥

दूसरे के दुख को भी अपने सा समझे, क्योंकि सुख जैसा अपने को होता है वैसाही दूसरे को।

परे वा बन्धुवर्गे वा मित्रद्वेष्टरि वा सदा।
आत्मवद्वर्तितव्यं हि दयैषापरिकीर्तिता॥

अपना हो या पराया, मित्र हो वा शत्रु सब के साथ वैसेही वर्ते जैसे अपने से। दया अपने स्वभाव में रक्खे, क्योंकि कहा है कि—

भीते क्षुधार्ते विक्रान्तरांतरे।
रोगाभिभूते बहुदुःखितान्तरे॥

दयान्तरंयः पुरुषो न सेवते।
वृथातरंतस्य नरस्य जीवितम्॥

भय क्षुधा रोग और दुखों से जो अति विकल हैं उनपर जो तरस नहीं खाता उसका जीनाही वृथा है।

दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान।
तुलसी दया न छोड़िये जबलग घटमें प्रान॥

शान्त क्षमा संतोष और धैर्य्य का सेवन भी गृहस्थियों का मुख्य धर्म है और सब से बिशेष कर यह कि मित्र से द्रोह न रक्खे, किसी से विश्वास घात न करे, और जो अपने साथ थोड़ी भी भलाई करे उसका सदा उपकार माने।

मित्रद्रोही कृतघ्नश्च ये च विश्वासघातका।
त्रयस्ते नरकंयान्ति यावच्चन्द्रदिवाकरौ॥

मित्र से द्रोह रखने वाले उपकार को न मानने वाले, और जो विश्वास घात करते हैं, जब तक आकाश में सूर्य और चन्द्रमा हैं यह तीनो नरक में रहते हैं।

आलस्य, निद्रा, और जंभाई भी गृहस्थ धर्म के परम शत्रु हैं, अनेक हानि की जड़ और पाप का घरहैं, शरीर धन और धर्म सब इन के सबब से नाश होता, गृहकार्य्य पड़े रह जाते और विगड़ते हैं, जो स्त्रियां अपना भला चाहें इन के पास न जायें, पति की सेवा में तत्पर और घर के काम काज में फुरतीली बनी रहें। गृहस्थी के लिये लोभ भी बुरी बला

है सारे यश और गुण इस के कारण मिट्टी में मिल जाते हैं कहा है :—

यशो यशस्विनां दिव्यं श्लाघ्याये गुणिनां गुणाः।
लोभः स्वल्पोऽपि तान्हंति चित्रं रूपमिवेप्सितम् ॥

अर्थ-बड़े २ यशस्वियों के यश और गुणियों के उत्तम गुणों को थोड़ा भी लोभ ऐसा नष्ट कर देता है जैसे थोड़े फूल पड़जाने से शरीर की शोभा जाती रहती है।

स्त्री के वास्ते बाहर भी फिरना अच्छा नहीं क्योंकि "सततं गमनादनादरो भवति" नित्य फिरने से सत्कार नहीं रहता है मनुस्मृति में भी मना किया है कि—

पानं दुर्जनसंसर्गः पत्याच विरहोटनम्।
स्वप्नोन्यगेहवासश्च नारी संदूषणांनिषट्॥९-१३

शराब पीना, बुरी संगत बैठना, इधर उधर फिरना, पति से वियोग रखना, जब देखो तब सोना, और पराये घर रहना, यह छः दोष स्त्रियों को नाश करदेते हैं। और यह भी कहा है कि—

पाखण्डमाश्रितानाञ्च चरंतीनाञ्च कामतः।
गर्भभर्तृद्रुहाश्चैव सुरापीनाञ्च योषिताम्॥

जो स्त्री पाखण्ड करती, निन्दित वस्त्र पहिरती, जहां तहां फिरती, गर्भ गिराती, पति को मारती या जो शराब पीती

है, उसको मरे पर जल भी न दिया जाये। और मिताक्षरा धर्मशास्त्र में तो यह भी आज्ञा है किः—

सुरापीव्याधिता धूर्ता वन्ध्यार्थघ्न्यप्रियंवदा।
स्त्री प्रसूश्चाधिवेत्तव्या पुरुषद्वेषिणी तथा॥

जो स्त्री मदिरा पीती, छल करती, धन लुटाती, कठोर बचन बोलती या पति से बैर रखती है उस को छोड़कर पुरुष दूसरा बिवाह करले। हारीतस्मृति का वाक्य है कि—

शीलमेव परं धर्मं नारीणां नृपसत्तम।
शीलभंगेन नारीणां यमलोकं सुदारुणं॥

अर्थ—स्त्रियों का मुख्य धर्म यह है कि शील संयुक्त रहें जो स्त्री शील को तोड़ती है, यमलोक को प्राप्त होती है।

लज्जा भी स्त्रियों का बहुत बड़ा भूषण है और उन की इसी में शोभा है कि सदैव इस से मण्डित रहें, और ऐसा यत्न रक्खें कि निर्लज्जता की झांई पड़ने न पावे, मैले चलन से प्रतिष्ठा न जाये, चाल ढाल में कोई खोट न बताये, ओढ़ने पहिरने में कोई अंगुली न उठाये, चिल्ला के न बोलें, फूहड़ शब्द मुँह से न निकालें, पर पुरुष से बेधड़क बात या हंसी ठट्ठा न करें अंग अंग अपना छिपाये रहें, गली बाजारों में बेपरदा न निकलें, मेले तमाशे में न फिरें, गंगा यमुना न जायें, नदी तालाब अथवा और किसी खुले स्थानमें न नहायें किसी के घर जाने का प्रयोजन पड़े तो नौकरों के संग न

जायें, घरके पुरुष या बड़ी बूढ़ी को साथ लें, घबराई हुई, या हाथ झुलाती, कन्धे मटकाती, चमकती और इठलाती न जायें, माथा झुकाये मुँह पेट छिपाये और पुरुषों को बचाये धीरे २ चलें, और इधर उधर न देखें, बुरी संगत में न बैठें बेहया, मनमाती फिरन वाली, वेश्या, कुटनी, पति द्रोही, चुगलखोर, बदचलन, फकीरनी, बहुरूपनी, और धोबिन इत्यादि नीच स्त्रियों से हित न बढ़ायें, और जो बराबर की न हों उन्हें गुइयां न बनायें।

बेसमझे बूझे कोई बात न कहें, बिचार और चतुराई से सारे व्यवहार बरतें सूधापन और उदारता स्वभाव में रक्खें मान महत्व को नित्य बढ़ायें और—

विद्या वपुषा वाचा वस्त्रेन विभवेन च।
वकारैः पंचभिर्युक्तो नरः प्राप्नोती गौरवम ॥

विद्या, वपु, (शरीर) वचन, (बोल) वस्त्र और विभव (धन) जो यह पांच वकार बड़ाई देने वाले हैं इनके संग्रह का रात दिन उद्योग करें क्योंकि—

सतगुण विद्या बिन पढ़े, नहिं पावत है कोय।
कहा पुरुष नारी कहा, कोई किनना होय॥

स्त्री चाहे कैसीही भली क्यों न हो पर बिना पढ़े अपने धर्म कर्म का पूरा २ निर्बाह नहीं कर सक्ती, वेद पुराण नीति सब यही कहते हैं कि जो स्त्रियां अपना भला चाहें वह—

शास्त्रं प्रज्ञा धृतिर्दाक्ष्यं प्रागल्भ्यं धारयिष्णुता।
उत्साहो वाग्मिता दार्ढ्यमापत्क्लेश सहिष्णुता।
प्रभावः शुचिता मैत्री त्यागः सत्यं कृतज्ञता।
कुलं शीलं दमश्चेति गुणाः संपत्ति हेतवः।

शास्त्रों को पढ़ें, गम्भीर बने, चतुरता सीखें, पतिव्रत में दृढ़ रहें, देखी सुनी बातों को याद रक्खें, मेहनत और उद्यम करने से न हटें, मीठा बोलें, दुख को सहें, मान और महत्त्व को बढ़ावें, देह और मन पवित्र रक्खें, सबका सत्कार करें बुरी बातों को छोड़ें, सदैव सच बोलें, जो भलाई करे उसका उपकार मानें, सुशील बनें, प्रतिक्षण प्रसन्न रहें और इन्द्रियों को चंचल न होने दें।

देखती हो कि इस श्लोक में भी सब से पहले पढ़ना ही लिखा है क्योंकि बिना पढ़े बुद्धि शुद्ध नहीं होती और शुद्ध बुद्धि के बिना और कर्मों का निर्बाह कठिन है। लोक परलोक दोनो का सुख केवल विद्याही द्वारा प्राप्त होता है। विद्या ही पाप और अधर्म मार्ग से बचाती है, और यही संसार में यश दिलाती और शोभा बढ़ाती है। नीतिशास्त्र का श्लोक है कि—

विद्या साधिता नारी भूषयालंकृता यदा।
तदा विभूषितांमन्येतत्तु हेमेन भूषिताम्॥

जब स्त्री विद्या के भूषण से सजी होती है, तभी और गहने भी शोभा देते हैं, बिना इस भूषण के सोने से चाहे कितनी ही लदी हो भली नहीं मालूम होती, इसी आशय का किसी कवि ने क्या अच्छा सवैया लिखा है, किः—

शोभा न देइ बिजायट बाहु में हारहु चन्द्र समान सजाये। फूल कि माला बनाइ लसे, तन धोये के चन्दन स्वच्छलगाये॥पानहु खाय सुवस्त्र धरे, भल सुंधेसुगन्धहु बार बढ़ाये।वाक् विभूषण हीन न सोहत, सारे अलंकृत जात नसाये॥

नीति शास्त्र का एक यह श्लोक भी है कि—

रूप यौवन सम्पन्ना विशाल कुल सम्भवाः।
विद्या हीन न शोभन्ते निर्गन्धा इव किंशुकाः॥

रूप योवन संपत्ति कुल सब कुछ अच्छा पाया हो तो भी एक विद्या के न होने से जैसे सुगन्ध रहित ढाक का फूल पूछा नहीं जाता, कहीं भी शोभा नहीं होती।

इस लिये उचित है कि जो स्त्रियां कुछ लिखी पढ़ी हैं वह नीति और धर्म शास्त्र की पुस्तकों के विचार से अपनी बुद्धि और विद्या को बढ़ावें, और जिन्हों ने बाल अवस्था में कुछ भी शिक्षा नहीं पाई है वह मन लगा के लिखना पढ़ना सीखें, पर इतनाही नहीं कि बुरे भले अक्षर गोद लेना और

सखी बिलास, सदाबहार वा हातमताई इत्यादि क किस्से पढ़ना आजायें, जिनसे और भी बुद्धि का नाश होता और निर्लज्जता आजाती है।

उनको चाहिये अक्षर ज्ञान होने पर पहले छोटी २ पुस्तकें जैसे नारीसुदशाप्रबर्तक, स्त्रीसुबोधनी; नारीधर्मविचार इत्यादि पढ़ डालें फिर ढूंढ़ २ के ऐसी २ पुस्तकों को पढ़ें जिनमें सतीधर्म, पतिप्रसन्नता, संतानपालन, धनरक्षा, और गृहकार्य की रीतियों का विधान हो। व्यवहारों में चतुरता के हेतु इतिहास देश और लोक वृत्तान्त की पोथियां देखा करें, नीति उपदेश और ज्ञान के ग्रन्थ समझ के पढ़ें और विचारें जिस में बुद्धि प्रबल हो धर्म अधर्म का बोध और सत्य असत्य का विवेक आवे।

पढ़ने में जहां न समझें किसी से पूछने में न लजायें, अपने पति से पढ़ें, पुत्र से पूछें या और कोई अपना छोटा वा नीच कुल का भी हो तो उससे भी सीखने में संकोच न करें, कहा है कि गुण, विद्या, सुन्दर वचन, और अच्छे आचार नीच बालक वा शत्रु से भी मिलें तो ग्रहण करना चाहिये। लिखने में अक्षर बना २ के लिखें हिसाब लगाना भी सीखें सूपशास्त्र जिस में नाना प्रकार के भोजन बनाने का विधान है पढ़ें, शिल्प अर्थात् हस्तकारी विद्या भांति भांतिके सुई के काम बनाना और चित्र खींचना भी जी लगाके सीखें और इसी तरह जहां तक गुण सीख मिलें उनको प्राप्त करने में लगी रहें।

बहुतेरी आलसी और मूर्ख स्त्रियां कहेंगी कि अपना धंधा तो निपटतही नहीं यह सब तितम्बे कौनकरे और किस

को इतनी छुट्टी है जो पोथी पट्टी लिये बैठी रहे। तो उनको उत्तर यह है कि जो आप दिन चढ़े तक पलँग तोड़तीं और अंगड़ाइयां लेती हैं, घण्टों दास और टहलनियों से ठांय २ मचाती और अनेक फूहड़पनेमें दिन गंवाती हैं, वही समय बचाइये और इन हितकारी कामों में दीदा लगाइये तौ भी बहुत कुछ आसक्षा है, क्योंकि कहा है कि—

कौड़ी कौड़ी जोड़ के, धनी होत धनवान।
अक्षर अक्षर के पढ़े, पण्डित होत सुजान॥

इस लिये कृपया आलसको छोड़िये और रात दिनके २४ घण्टों को इसप्रकार से बांट दीजिये, कि १० बजे रात को सोइये, ४ बजे उठिये, ५ बजे तक शौच स्नान करके, ६ बजे तक सन्ध्या वा अग्निहोत्र कीजिये ७ बजे तक धार्मिक ग्रन्थों का स्वाध्याय और बच्चे हों तो उनका मुँह हाथ धुला कपड़े पहना बाहर हवा खिलाने भेज दीजिये, और जब तक झाड़ू बुहारू चौका बासन हो रसोई की सामिग्री ठीककर डालिये और १० बजे तक खिलाने खाने से छुट्टी करके २ घंटे गृहस्थी के काम और असबाब के संभालनेमें खर्च कीजिये फिर २ बजे तक लिखिये पढ़िये, दो घंटे सुई का काम और चित्र आदि बनाइये, एक घंटा आये गयेका आदर सन्मान कीजिये और दिल बहलाइये, घंटा भर बच्चों का लिखना देखिये और उनको फुसलाइये, ६ बजे से सांझ की रोटी पूरी आदि बना ६ बजे तक सब को खिला धरा उठाई कर और तमाम दिन के खर्च का हिसाब लगाकर फिर स्वामी की सेवा में

जाइये, तो इस तरह सब काम पूरे पड़ जायेंगे और थोड़ेही दिनोंमें आप गुणवान, विद्वान, बुद्धिमान, और ज्ञानवान सब कुछ हो जायेंगी, और विद्याके बलसे अपने प्राणपति को भी उसके व्यवहारों में सहायता देने लगेंगी—नीतिशास्त्र कहता है किः

यस्यास्ति भार्या पठिता सुशिक्षिता ।
गृह क्रिया कर्म सुसाधने क्षमा ॥
स्वजीविकां धर्म धनार्जनं पुनः ।
करोति निश्चित त्यो हि मानुषः ॥

अर्थात् जिसकी भार्या अच्छी पढ़ी लिखी और घर के कामों में चतुर होती है, वह पुरुष अपनी जीविका धन और धर्म का संयम अच्छी प्रकार से कर सक्ता है ।

इसके सिवा लिखी पढ़ी और गुणवान स्त्री विपत्तिकाल में दुख नहीं उठाती, अपनी विद्या और गुणों से उत्तम रीति और धर्म के साथ निर्वाह करती, शिल्प विद्या के बलसे नई नई २ चीज़ अपनी बुद्धि से बनाती, सुन्दर तसवीरें खींचती, पोथियां लिखती, और अनेक गुणों से धन उपार्जन करके आप सुख से रहती, बच्चों को पालती और उनको लिखाती पढ़ाती है । फिर उत्तम शिक्षा भी उन्ही के बालक पाते और भाग्यवान होतेहैं जो स्त्रियां आप विद्वान और गुणवान होती हैं, और जो मूर्ख हैं उनकी सन्तान भी मूर्ख ही होती है । जैसा कि कहा हैः—

यावत् न साक्षरा माता तावत् बाल बालिकाः।
निरक्षराः हि तिष्ठन्ति विनोपाय सहस्रकैः॥

अर्थ-जिनकी माता पढ़ी नहीं होती हैं उनकी शिक्षा में बड़ा उपाय करना होता है। कारण इसमें यही है कि जब स्त्री आपही कुछ नहीं जानती तो बच्चेको क्या सिखा सक्ती है, उन्हें तो इतना भी ज्ञान नहीं कि बच्चा क्योंकर बनता और कैसे बिगड़ता है।

जो स्त्रियां शास्त्र जानती हैं उनको अच्छी प्रकार से इस की रीति मालूम होती है, और वह गर्भही काल से यत्न करती हैं कि बच्चा बिगड़ने न पावे, और जन्मही से उसका स्वभाव बनातीं और ऐसे ढब डालती हैं कि ज्यों २ शरीर उसका बढ़ता बुद्धि भी बढ़ती जाती है, और स्याने होने पर थोड़े ही परिश्रम में सर्व विद्या निधान हो जाता है।

जहां स्त्रियां पढ़ी नहीं होती हैं उस देश में मूर्खता का अन्धकार छाजाता और दरिद्रता घेर लेती है, दृष्टान्त में यही अपना देश प्रत्यक्ष है जो अगले समय में विद्या का घर कहा जाता था जहां के मनुष्यों को देवता की पदवी थी, सारी पृथवी के मनुष्यों ने जहां विद्या का प्रकाश पाया था, गुण संपत्ति किसी वस्तु की जहां कमी न थी, और अब जब से विद्या और गुणों का यहां से लोप हुआ है वह अभाग्य छाया है कि दूसरे देशके लोग यहांके मनुष्यों को पशु समान जानते और महा तुच्छ समझते हैं।

धर्म का ऐसा नाश होगया कि जितने अधर्म हैं पुण्य समझे जाते हैं, पुत्र को पिता से बैर, पत्नी को पति से बिरोध, कन्या को माता से बिवाद, और भाई को भाईसे द्रोह-परमेश्वर में निश्चय नहीं, भूत प्रेत पूजे और मियां पीर मनाये जाते हैं, इन सब दुर्दशा का कारण विशेष कर यहां की स्त्रियों की मूर्खता है, कि उनके अनपढ़ होने से यह दुर्गत हुई आगे यह बात न थी, स्त्रियां यहां की बड़ी २ ज्ञानी बुद्धिमान, और पण्डिता होती थीं और यही कारण था कि उनकी सन्तान भी वैसीही प्रतिष्ठित, प्रतापी, विद्वान् और गुणवान निकलती थी, देखिये कपिलमुनि की माता का नाम देवहूती था जो ऐसी विद्वान् थी कि उन्हों ने सांख्य शास्त्र का प्रचार किया, कश्यपमुनि की स्त्री ने अर्थशास्त्र बनाया, कौशिल्या जी ने नीति शास्त्र लिखा, सुमित्रा ने धर्मनीति वर्णन किया, मन्दालसा इतनी बड़ी ज्ञानवान थी कि अपने पुत्र को ब्रह्मज्ञान सिखाया, बिदूला ने अपने बेटे को आप राजनीति पढ़ाया, विद्याधरी को देखिये कैसी पण्डिता थी कि शंकराचार्य्य ऐसे महामुनि को शास्त्रार्थ में परास्त किया, इसी प्रकार अदुती, अनुसूया, सत्तरूपा कुन्ती, द्रौपदी, सरस्वती रुक्मिणी, रेणुका, मन्दोदरी इत्यादि अनेक स्त्रियां महापण्डिता हो गई हैं इन के जीवन पर दृष्टि डालिये और उस से लाभ उठाइये।

अब इन पिछली बातों और पिछली स्त्रियोंको छोड़कर जरा मेमों को देखिये और शर्माइये! देखिये तो एकसे एक कैसी विद्वान्, बुद्धिमान, गुणी और चतुर हैं, क्या यह घर

द्वार नहीं रखतीं? और इनको कोई धंधा नहीं रहता है? आपको तो अपनी भाषा सीखना कठिन हो रहा है, और वह अपनी देश भाषा के सिवाय अनेक विद्या और गुण सीखतीं अंगरेजी, फ्रांसीसी, अर्बी, फारसी, हिन्दी, संस्कृत सब कुछ पढ़ लेती हैं और दस्तकार भी कैसी होती हैं कि आप उनके हाथ के मोजे, दस्ताने, गुलूबन्द, फूल, बूटे इत्यादि बनाये हुए देख २ कर भौचक्की हो रहतीं हैं, तसवीरें कैसी खींचतीहैं कि मानों जान डालदी। फिर देखिये कि यह बुद्धिमान स्त्रियां कितनी भाग्यवान हैं कि धन पुत और लक्ष्मी सब से परिपूर्ण हैं,और यहां की अभागियों को रोटियां तक नहीं जुड़तीं, क्यों, इस कारण से कि वह तो चाहेजितनी धनाढ्य हों कभी निकम्मी न बैठेंगी, कुछ न कुछ काम हरदम करतीं, अपनी विद्या और गुणों को बराबर बढ़ाती रहती हैं!

और यहां जिन स्त्रियों को जरा भी सुख हुआ पान तक अपने हाथ से बनाकर नहीं खातीं, कुर्ती का बन्द भी टूट जावे तो दर्जी से सिलाती हैं, बस यहां इस अविद्या और आलस्य ने यह मुसीबत बढाई है।

अब जो मैंने ऊपर लिखा है कि पढ़ी लिखी और विद्वान स्त्रियों की संतान भी वैसीही होती हैं। उसका भी मुक़ाबिला अपने देश के मनुष्यों से कर लीजिये, देखिये तो यह साहब लोग जो विद्वान स्त्रियोंकी औलादहैं, कैसे विद्या निधान बलवान, गुण और बुद्धि की खान, तेजस्वी और प्रतापी हैं जो आपके देश में न्याय पूर्वक राज्य करते हैं। जो आप भी आलस्य को छोड़ दें विद्या और गुणों को सीखें तो

आप की सन्तान भी वैसीही भाग्यवान होजावे मूर्खता और दरिद्रता देश से जाती रहे।

❀ शरीर और आरोग्यता ❀

दूसरा वकार वपु अर्थात् शरीर है जिसका बचाना और नीरोग रखना भी अति आवश्यक है, क्योंकि—

धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलकारणम् ।
रोगास्तस्यापहर्तारः श्रेयसो जीवितस्य च ॥

अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारोंका मूल कारण निरोगता है, रोग होने से स्वास्थ्य अर्थात् तन्दुरुस्ती, सुख और जीवन सब नष्ट हो जाते हैं, संसार के सारे व्यवहार शरीर की पुष्टता बल और सुखी होने के अधीन हैं जहां यह दुर्बल हुआ रोगों ने आ घेरा, रंग रूप सब जाता रहा और सुख वा आनन्द ने जवाब दिया, इस वास्ते बड़ी रोक इस की चाहिये कि शरीर टूटने और बल घटने न पावे, नहीं तो सैकड़ों ही उपाधि उत्पन्न होंगी और जान भारी हो जायगी।

❀ श्रम ❀

निरोगता के निमित्त शरीर के जितने अंग हैं, वह सब श्रम चाहते हैं, काम न करने से कर्म इन्द्रियां शिथिल हो जातीं, अनेक रोग उत्पन्न होते और स्त्रियां तो बहुधा बांझ हो बैठती हैं, जननशक्ति जाती रहती है और दैव संयोग से बालक होते भी हैं तो छोटे २ और जनने में बड़ी पीड़ा पातीं हैं।

❀ हवा खाना ❀

इसके सिवा तन्दुरुस्ती के लिये ताज़ी हवा और वह भी विशेषकर सवेरे की बहुत ही दरकार है जो वैद्यक शास्त्र लिखता है कि रोगों को नाश करती, शरीर को बल पहुंचाती और बुद्धि वा उत्साह को बढ़ाती है, इस वास्ते परिश्रम करना, बड़े सवेरे उठना और हवा खाना अत्यन्त आवश्यक है।

❀ टहलना और धंधा करना ❀

जो स्त्रियां परदे के सबब घरसे बाहर नहीं जा सक्तीं हैं उनको यह उचित है कि नित्य थोड़ी देर घर के आंगन में टहलें और काम धंधा करने में शरीर से इतना श्रम लें कि पसीना आजाये, क्योंकि इससे एक प्रकारका विष जो शरीर में होता है निकल जाता है और चलने फिरने और मेहनत करने से खाना पचता, कोठा शुद्ध रहता, मुख का रंग निखरता, गालों पर लाली आती, आंखों की जोत बढ़ती और देह सुन्दर बनी रहती है और इसीलिये वैद्यक शास्त्र बारंबार प्रेरणा करता है कि जो स्त्रियां अपना हित और सती धर्म्म का निर्वाह चाहें, आलस्य को छोड़ें, क्षणमात्र भी खाली न बैठें कुछ न कुछ धंधा बराबर करती ही रहें।

❀ स्नान ❀

ठंढे जल से रोज नहाना भी शरीर को पुष्ट करता और मन को हर्ष देता है, परन्तु यों नहीं कि देह भीगे या न भीगे दो लोटे उँडेल लिये, इससे न देह शुद्ध होती है और न कुछ

लाभही होताहै । स्नान की विधि यह है कि पहले हाथ मल कर धोये, फिर मुँह पर पानी के छींटे डाले और प्रथम हाथों से फिर अँगोछे से मले और इसीप्रकार नाक कान भी साफ करे, इसके पश्चात् तौलिया या अंगौछा भिगो भिगो कर गर्दन, पेट, पीठ, कंधा इत्यादि सब अंग अच्छी तरह रगड़े और धोती जाय, और यों सारा बदन खूब मल कर नहाये। स्नान जब करचुके तो पांव जल में डालकर अंगौछे से मले और अंगुली, अंगूठा, गाई खूब रगड़कर धोये और जल छोड़ती जाय ।

नहाने और इन सब कामों में देर न लगाये विशेषकर जाड़े में, और शरीर को ऐसा पोंछे कि पानी का अंश न रहने पाये, फिर कपड़े बदलकर थोड़ा चले फिरे जिस में शरीर गर्मा जाये । इस विधि से नित्य नहाने और देह मलने से बड़ा गुण होता है, शरीर पुष्ट होजाता, और रोग जल्दी पास नहीं आता है ।

जब स्त्री मासिक धर्म से होये, उन दिनों पानी और ठंड दोनों से बहुत बची रहे, ठंडे जल से पैर तक न धोये, न कोई ठंडी चीज खाये, और अति परिश्रम भी न करे, मन को प्रसन्न रक्खे, चिन्ता किसी प्रकार की जी में न लाये ।

❋ प्रसन्नता ❋

प्रसन्न चित रहने और हंसमुख होने से भी तन्दुरुस्ती बढ़ती, मुख पर शोभा आती, और आयु दीर्घ होती है, इस

वास्ते उचित है कि स्त्रियां सर्व काल में चित को प्रसन्न मन को शांत, हृदय शुद्ध और स्वभाव मधुर रक्खें।

❀ क्रोध इत्यादि ❀

क्रोध डाह ईर्षा शोक और भय, आरोग्यता के परम शत्रु हैं, और चिन्ता तो ऐसी बला है, कि कहा है—

चिता चिन्ता द्वयोर्मध्ये चिन्ता चैव गरीयसी।

चिता दहाति निर्जीवं चिन्तादहाति सजीविकम्॥

चिन्ता चिता से भी बड़ी है क्योंकि चिता तो मरे पर और चिन्ता जीते ही जी जलाती है।

यह सब अवगुण शरीर को तोड़ देते हैं, वैद्यक शास्त्र में लिखा है कि इन के कारण रुधिर में एक प्रकार का विष पैदा हो जाताहै, भूंख बंद हो जाती है, पेट साफ़ नहीं रहता कपोलों पर गढ़े पड़जाते,मुख पीला पड़जाता और आयु भी कम हो जाती है, आग तापना और धूप में बैठना भी वैद्यक शास्त्र में निषेध है, इस से भी अजीर्ण होता, शरीर ढीला, शिथिल और निर्बल होजाता, रंग मैला और पीला पड़जाता और मुख की शोभा जाती रहती है। धर्मशास्त्र में भी आग को मुँह से फूंकना और पैर सेंकना बर्जित है, क्योंकि अग्नि को मुँह से फूकने में नेत्रों को हानि पहुंचती और पैर सेंकने से शरीर का रुधिर जलता है, देखिये मनु अ० ४ श्लो० ५३

नाग्निम्मुखे नोपधमेन्नग्नान्नेक्षेत च स्त्रियम्।

नामेध्यं प्रक्षिपेदग्नौ न च पादौ प्रतापयेत् ॥

अर्थ—अग्नि को मुँह से न फूंके, स्त्री को नग्न न देखे, कोई बुरी बस्तु अग्नि में न डाले और न पैर तपाये।

❀ आहार ❀

आहार भी ऐसी चीज है जिस के बिना कोई जी नहीं सक्ता पर साथही उसके यह विषका भी गुण रखताहै, जितना पथ्य भोजन गुण करता है, उतना ही कुपथ्य अवगुण, परन्तु बहुतेरी स्त्रियां इस का कुछ बिचार नहीं करतीं भला बुरा कच्चा पक्का जो मिला खा लेती हैं, और बहुत सी तो ऐसी मूर्ख हैं कि पकाने का ढब भी नहीं रखतीं, कोई पदार्थ जला देतीं कोई कच्चा उतारती हैं, न नमक और पानी का अंदाज जानतीं, न भला बुरा स्वाद पहचानती हैं, और रंग रूप ऐसा घिनौना कर देती हैं कि देखतेही जी फिर जाये, उस पर स्वभाव की भी ऐसी कर्कश कि पति अभागा कुछ कहता तो उत्तर भी जला कटा पाता है, कि जिसको न भाये आप बना खाये, शर्म ! शर्म !! शर्म !!!

रसोई बनाना स्त्रियों का मुख्य काम है उनको चाहिये कि चित्त लगाकर इसको सीखें, सूपशास्त्र की पोथियों को जिन में नाना प्रकार के भोजन और व्यंजन बनाने की विधि लिखी हैं पढ़ें और उसी बिधि से बनायें, कच्चे और पक्के का बड़ा ध्यान रक्खें, कोई चीज जलने भी न पाये बू बास, रंग रूप और स्वाद की सुन्दर उतरे, पकाने और खाने में हर

चीज के गुण और अवगुण को भी बिचार लिया करें, जो वस्तु बिकार करे कभी न बनायें और न खायें।

आहार वही श्रेष्ठ है जो साधारण और स्वाभाविक हो, स्वाभाविक उसको कहते हैं जो रुचि के साथ नित्यही खाया जाता और कभी उससे मन नहीं हटता है, जैसे रोटी, दाल; चावल, भाजी इत्यादि, बाकी जितनी बनावट की चीजें हैं, दो दिन खाने से जी हट जाता है, और वह सिवाय अवगुण के कोई गुण नहीं करतीं, इस लिये सदा साधारण पुष्ट और उत्तम आहार करना चाहिये, और एर फेर के।

इसका भी बड़ा बिचार रहे कि खाने में ठोस और अग्नि घटाने वाले पदार्थ न हों, और न रूखा, सुखा, सड़ा बुसा हो, क्योंकि ऐसे पदार्थ बड़ेही हानिकारक होते हैं।

बहुधा स्त्रियां रसोई बनने से पहले बासी रोटी अथवा पकवान कुछ खालेती हैं, खाली पेट में यह चीजें भी नुक़सान करती हैं, शक्ति हो और कोई विकार भी न करे तो उस समय थोड़ा दुध पीलें, अथवा मक्खन खायें, दुर्बल शरीर को ताज़ा दूध व मक्खन बहुत ही गुण करता है, बहुत सा खाना भी अच्छा नहीं, इससे कोठा बिगड़ता और बल घटता है, उतना खाना चाहिये जो अच्छी तरह से पचजाय और गुण करे, बेभूख भी कभी न खाये और न वह चीज जिस पर रुचि न हो। बार बार खाना भी बुरा है, एक बार का खाया हुआ तीन घंटे से कम में नहीं पचता है, इस लिये एक खाने के बाद दूसरी चीज के खाने में चाहे थोड़ी भी हो कमसे कम तीन घंटा अंतर ज़रूर दे, और भोजन का समय

नियत कर रक्खे यह नहीं कि कभी किसी वक्त और कभी किसी वक्त खालिया ।

बहुत गरम खाना भी न खाय कि इससे प्रमेहादि रोग उत्पन्न होजाते हैं, और न विरोध भोजन कभी करे जैसे दूध के साथ गुड़, खीर के संग नींबू, तेल के संग दही, मूली के साथ मीठा इत्यादि, और न बहुत चिकना खाय, न ज्यादा खटाई, मिठाई, मिर्च, राई या और कोई गर्म चीज़ क्योंकि इन से पित्त बढ़ता है ।

भोजन बड़ी सुथराई के साथ खाय, खाने के समय मन को स्थिर प्रसन्न और शांत रक्खे, और धीरे २ भोजन करे ग्रास छोटे २ और खूब चबा चबा कर खाय, जितना ही चबलाया जायेगा उतना ही पचेगा और गुण करेगा, भोजन के साथ बार २ जल भी न पिये, और पिये भी तो अंत में थोड़ा सा, भोजन के १ घंटे के बाद जल पिये तो आहार जल्दी पचता है ।

पानी एक सांस में न पिया करे, और हर सांस में पीकर पानी नाक से अलग हटा दिया करे, और चलके आकर, दिशा से आके, पसीना जब निकलता हो, लेटे हुये कभी न पिये, अजीर्ण हो तो पानी कई बार थोड़ा कर के पिये और बांई करवट लेटे, भोजन कर के पाव घंटे तक कुछ काम न करे शरीर को थोड़ा विश्राम दे ।

बैठना ।

बैठने में पेट के बल या घुटनों पर कुहनी टेक के अथवा

किसी प्रकार अंग टेढ़ा करके कभी न बैठे इस से भी पाचन शक्ति कम हो जाती है, सीधा और तन के बैठना अच्छा होता है।

दर्वाज़े या खिड़की से चाहे बंद भी हों पीठ लगाके बैठना या खड़े होना भी बुरा है' क्योंकि हवा का एक छोटा झिकोरा भी सीधा पीठ पर लगने से सर्दी होजाने का डर रहता है दोनों कंधों के बीच का पिछला अंग ठंड से बहुत बचाना चाहिये, क्योंकि उसी ज़गह फेफड़े शरीर से संयुत हैं और हवा के सीधे झिकोरे से तुरन्त ही लोहू ठंडा होजाता है कदाचित् इस भांति सर्दी पहुंचे तो कंधे और छाती को सांझ सवेरे गर्म जल से सेंकना और तारपीन का तेल मलना बहुत गुण करता है, गर्म जल से इस भांति सेंके कि एक साफ बोतल में गर्म पानी भरें और डाट बन्द करके उस से सेंके, पानी इतना गर्म न हो कि बोतल टूट जाय।

शरीर को निरोग रखने के वास्ते पूरी नींद सोना भी बड़ा ही लाभकारी है, ६ घंटे से कम और आठ घंटेसे अधिक भी न सोना चाहिये, प्रातः आंख खुलते ही उठ बैठे, फिर झपकी न ले, न पड़ी २ अंगड़ाइयां ले, क्योंकि जगने के पश्चात् देर तक पड़े रहने से पाखाना फिर खुल कर नहीं होता है और पाखाना खुलकर न होने से तरह तरह की बीमारियां पैदा होजाती हैं।

स्वास्थ्य अर्थात् तनदुरुस्ती रखने के वास्ते रहने का घर भी ऐसा होना चाहिये जो गढ़ेयों और नालों पर न हो, और न ऐसी जगह जहां सील और वायु ख़राब हो, ऊंची

ज़मीन, ऊंची कुर्सी और ऊंची छत हो हवा चारों ओर से आती और धूप भी पहुंचती हो छत और दीवारों में ऊंचे और बड़े २ ब्याले हों, जिस में गंदी हवा ऊपर निकल जाय, नाबदान और मुहरियां भी बंद न हों, न संडास और मुहरी के पास पानी पीने का कूआं हो, क्योंकि इन के मेल से कुयें का पानी विष के समान होजाता है। घर में जगह भी इतनी हो जिस में अन्न पानी धरने, असबाब रखने, रसोई बनाने का ठौर, और जै मनुष्य हों सब के सोने बैठने का अलग २ ठिकाना हो, यह नहीं कि एक २ कोठरी में चार २ भरे और उसी में घड़े मटके भी धरे हों, इस तरह से रहने में स्वास्थ्य अच्छी नहीं रह सक्ती, बहुत से विकार उत्पन्न हो जाते हैं, और बहू बेटियों की लज्जा भी जाती रहती है।

जिस घरमेंरहे उसको अच्छी तरहसे साफ और सुथरा रक्खे, प्रातःकाल जितने दर्वाजे और खिड़कियां हों सबको रोज खोल दे, जिस में उस समयकी पवन भीतर प्रवेश करे और सूर्य्य उदय होने पर प्रकाश पहुँचे, ताजी हवा और धूप बिकारों को दूर और रोगों को नाश करती है।

इस रीति से जो रहते और वर्तते हैं, रोग उनके पास फटकने नहीं पाता, क्योंकि वीर्य्य और बलका नष्ट न करना, संतुष्ट, शांत, प्रसन्न और सुथरा रहना, चलना फिरना और परिश्रम करना, विमल पवन का लेना, निर्मल जल पीना, विधि से नहाना, क्रम से खाना, क्रम से सोना सवेरे उठना और घर को स्वच्छ और पवनीक रखना, यह सब कर्म ऐसे हैं कि इन के साधने से प्रतिदिन शरीर पुष्ट होता, मन प्रसन्न

रहता, बुद्धि बढ़ती और आयु दीर्घ होती है । पर इस से बिपरीत चलना, अर्थात् राग भोग में लीन रहना, आलस्य को बढ़ाना, काम धंधा न करना, हरदम कुढ़ना, क्रोध और चिन्ता रखना, चित्त और देह से मलीन रहना, बहुत खाना बहुत सोना, बहुत जागना, मैला घर और मैली आदत रखना रोग क्या मृत्यु को बुलाना है ।

इस पर बहुतसी स्त्रियां यह अनर्थ भी करती हैं कि कोई रोग होजाता है, तो जब तक वह शरीर को तोड़ नहीं देताहै, बराबर छिपाती और दवा खाने से भागती हैं और फल इस का यह है कि महीनों भोगतीं और उमर भर को बे काम हो बैठती हैं ।

रोग थोड़ा भी हो तो भी उस को महा वैरी समझना चाहिये, छिपाना और घर करने देना अच्छा नहीं, ज्योंही उत्पन्न हो तुरंत चिकित्सक को बुलाये, सारा हाल उस से कहे, और जो वह परहेज बताय करे, और कैसीही कड़वी या स्वाद की बुरी दवाई दे जरूर खाये ।

बाज़ी स्त्रियां बहमी और दवा खाने की ऐसी आदी होती हैं कि बिना कारण भी दवाई ढूंढ़ा करतीं, जो जिसने बताया खा लेतीं और ज़रा से क़ब्ज में भी मेदे को अत्तार की दूकान बना देती हैं ।

यह लक्षण भी बहुत ही बुरे हैं, बिना प्रयोजन और उस पर भी ऐसी वैसी दवा खाना मानो रोग को बुलाना और शरीर में घुन लगाना है, आये दिन दवाई खाने से पेट और आंतों की नली बिगड़ जाती और बहम करते २ अन्त में

सचमुच रोग पैदा होजाता है, इस लिये ऐसी आदत कभी न करे, गिरानी मालूम हो, या कोठे में मल रुक जाये तो रात को सोते समय गर्म दूध मीठा मिलाके या जब सवेरे सोके उठ एक गिलास ठंढा जल पीले, या ज्यादा जरूरत हो तो गुनगुने जल में साबुन मिला के पिचकारी लेले, इस से सारी तकलीफ़ दूर हो जायगी, पिचकारी लेने के बाद हलकी चीज खावे।

तीसरा वकारवचन और बोलनेकी रीति

बोल चाल एक ऐसी चीज है जो सब से पहले देखी जाती है और इसीसे गुण अवगुण की परीक्षा होती है, जिन का बोल शुद्ध, सत्य, कोमल और मधुर होता है जगत् में उनकी सराहना होती और मान बढ़ता है, और जो जबान की फूहड़ वा मिथ्यावादी हैं उनको घर बाहर सब जगह अपमान उठाना पड़ता है। किसी कवि ने बहुत ठीक कहा है कि—

बचन मूल जग को व्यवहार।
स्वर्ग नरक सुख दुख संसार॥

शास्त्र लिखता है कि—

नास्ति सत्य समो धर्मो न सत्याद्विद्यते परं।
न हि तीव्रतरं किंचद् नानृतादिह विद्यते॥

अर्थात्—सत्य के समान दूसरा धर्म नहीं, न इससे बढ़ कर कोई पदार्थ है, और न मिथ्या से बुरी दूसरी वस्तु है।

और भी कहा है कि—

नास्ति सत्यात् परोधर्मो नानृतात् पातकं परम्।

अर्थात् सत्य बराबर तप नहीं, और झूठ बराबर पाप। यह कहावत लोक प्रसिद्ध ही है। परन्तु—

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्।
प्रियं च नानृतं ब्रूयादेष धर्मः सनातनः॥

सत्य बोले लेकिन प्रिय हो अप्रिय सत्य कदापि न बोले जैसे काने को काना कहकर पुकारना गो सत्य है परन्तु अप्रिय है, और दूसरे के प्रसन्न करने के लिये कभी झूठ भी न बोले। क्योंकि—

सत्यमेव व्रतं यस्य दया दीनेषु सर्व्वदा।
कामक्रोधौ वशे यस्य तेन लोकत्रयंजितम॥

जो सत्य का व्रत करते, दीन पर दया करते और काम क्रोध वश रखते हैं वही तीनों लोक जीत लेते हैं। और बात चीत करनेकी रीति यह लिखी है कि—

प्रियं तथ्यं च पथ्यं च वृद्धे धर्मार्थमेवच।
अश्रद्धेयमसत्यं च परोक्षं कटुचोत्सृजेत्॥

प्रिय, यथार्थ, धर्म और अर्थ संयुक्त बोले, ऐसी बात जो मिथ्या हो, जिस पर कोई विश्वास न करे, जो दूसरे को

बुरी लगे कभी मुँह से न निकाले, न पीठ पीछे किसी को बुरा कहे।

सत्यं मृदु प्रियं वाक्यं धीरो हितकरं वदेत् ।
आत्मोत्कर्षं तथा निन्दां परेषां परिवर्ज्जयेत् ॥

सदा सत्य, कोमल, मधुर और हितकी बात कहे, अपनी प्रशंसा और पराई निन्दा न करे, मनुस्मृति में भी ऐसाही कहा है कि—

वाक्य चैव मधुराश्लक्ष्णा।
प्रयोज्या धर्ममिच्छता ।

जिस को धर्म की इच्छा हो वह सर्वदा मीठा बोले और अच्छी बात कहे ।

इसलिये चाहिये कि सब से सच और मधुर बोले, किसी को रूखी फीकी कड़वी और ऐसी बात कभी न कहे जिससे उसके हृदय में चोट लगे और उद्वेग उत्पन्न हो ।

जो कुछ कहे पहले अच्छी तरह सोच बिचार ले, यह नहीं कि जो मुँहमें आये बक दे, बिना समझे बूझे बक उठने से हंसी और हानि भी होती, बात भी जाती और पछिताना पड़ता है।

किसी की बात न काटे, जब दो मनुष्य आपस में बार्ता करते हों उनके बीच में बोल न उठे और जिस बात को जानती न हो उस में कभी तर्क न करे, क्योंकि यह सब मूर्खता के लक्षण हैं।

चिल्ला के बोलना, बहुत बातें बनाना, और व्यर्थ बकना भी स्त्रियों को दूषित करता और धर्मशास्त्र में तो ऐसी स्त्रियों के साथ विवाह करना भी मना किया है।

स्त्रियों की बोली मधुर, प्रिय, धीमी और सुरीली होनी चाहिये, जिनका बोल भारी और कड़ा होता है वह पुरुष संभाषिणी कहलातीं और कठोर समझी जाती हैं, इस के सिवा बहुत बोलने और चिल्लाने से लज्जा भंग होती और ऐसी स्त्री चाहे सदाचारिणी क्यों न हो परन्तु सुननेवाले उस को दोष लगाते हैं।

बात चीत करने में किसी से उलझ बैठना और अपनी बात पर हठ करना भी अच्छा नहीं, इस में बात बढ़ जाती और दिलों में मैल आजाता है, लुतरापन ळगाई वुझाई या पीठ पीछे किसीकी बुराई करना भी महा दोष है।

मर्दों से बेधड़क और आंख मिला कर बात न करे, बोलने में बड़ाई छुटाईका विशेष ध्यान रक्खे, बड़ोंसे आधीनताई के साथ. बराबर वालियों से हंस कर, और छोटों से प्यार सहित बोले, गुस्से में यदि कोई कुछ कहे तो टाल जाय, उत्तर न दे, और इस उपदेश पर सदा चले किः—

मधुर मनोहर सत्य युत, बचन बोलिये नित्य।
अत्तर कमऔर अर्थ बहु, जोनहिं होय अनित्य ॥

❀ वस्त्र विधान ❀

चौथा वकार वस्त्र है जो यत्नके साथ ऋतु अवस्था और

समय का विचार करके पहिना जावे तो इस से शरीर की रक्षा रहती, लज्जा का प्रतिपाल होता, और रूप वा मर्यादा की शोभा बढ़ती है। परन्तु हमारे देशकी स्त्रियोंका जो आज कल पहिनाव है उस से यह कोई हेतु नहीं निकलता, और विशेष कर धोती से जिस को पूरी निर्लज्जता का जामा कहा जाय तो अनुचित नहीं, और जो पहनी भी इस ढंगसे जाती है कि उसके वर्णन करने में लाज आती है, पर अफ़सोस! पहिरने वालियों का दीदा ऐसा साफ़ है, कि बाप हो वा भाई, ससुर हो या देवर जेठ, सबके सामने बेधड़क आधी २ टांगें नंगी और पेटखोले फिरती हैं,जरा भी नहीं शर्मातीं,और जिन को परमेश्वर ने कुछ धन दिया है उनकी धोती तो महीन भी इतनी होती है कि रोम रोम दिखाई देते हैं और गंगा यमुना में स्नान के समय की लीला तो अपार है, शरीर और उस में कोई भेद जान ही नहीं पड़ता, और उस पर जो कहीं कोई टोक बैठता और कहता है, कि नहाने के समय तो मोटी धोती बांध लियाकरो और यों गले में कुरती और नीचे तहबंद रक्खो, तो जवाब पाता है कि भारी धोती संभलती नहीं, कुर्ती बदन में चुभती और तहबंद गड़ता है।

इसी प्रकार जिन बिर्ली जातों में लहँगे दुपट्टे और छोटे कपड़े का पहिनाव थोड़ा बाक़ी है उन का लहँगा भी ऊंचा और ओछा होता, दुपट्टा देहसे अलगही रहता, और अस्तीन दार कुरती या सलूके की तो उनके यहां भी मानो सौगंद है।

फिर कपड़े पहिरने में तो यह सुकुमारी पर ढाई सेर चांदी के कड़े पाजेब, और सवा सेर छल्लों की बेड़ियां धूप

हो चाहे पाला पड़े, कंकड़ छिदें या मैला भरे, नंगे पैर फिरतीं, और जूती पहिरना महा दूषित और निन्दित समझती हैं वाहरी मूर्खता ! जिसने न देह की सुध रक्खी, न नंगे उघारे की लाज।

स्त्री के लिये ऐसा प्रमाद किसी प्रकार अच्छा नहीं, लज्जा उसके वास्ते भूषण से भूषण है उस में ज़रा सी भी मैल आई और शोभा उसकी जाती रही, चाहे कोई भी दोष उसमें नहो तो भी इन चालों से कलंक लगता है, दिल में क्या है कोई नहीं जानता. बाहर की चाल ढाल सब देखते हैं, और फिर पहराव, इस में तो जरासा भी दोष हुआ और हजारों ऐब लगे, कहीं हवा से भी पल्ला उठ गया और निन्दा होने लगी इस वास्ते हे सुन्दरियो ! तुमको चाहिये कि कपड़ों की कीड़ा हो रहो, और शिर से नख तक अंग अंग को हजारों तह में छिपाओ, देखो कामन्द-कीय-नीति सार का वाक्य है कि—

गमनं विह्वलत्वं च संज्ञा नाशो विवस्त्रता।

अर्थात् जो स्त्री इधर उधर फिरती घबड़ाई हुई रहती अच्छी बातों को भूल जाती, और अपने देह को वस्त्रों से अच्छी तरह नहीं ढांपती है वह महानिन्दित है।

और मानव धर्मशास्त्र का प्रमाण तो तुम ऊपर पढ़ ही चुकी हो कि "जो स्त्रियां निन्दित वस्त्र पहिरती हैं उनको मरे पर जल भी न देना चाहिये" निन्दित वस्त्र उन्हीं कपड़ों को कहते हैं जिन से अच्छी प्रकार सारा बदन न छिपे।

अब वैद्यकशास्त्र का भी प्रमाण सुन लीजिये, वह कहता है कि छाती खुली रखना और कुरती सलूका आदि न पहिने रहना बड़ी भारी मूर्खता है, क्योंकि दोनों हँसुलियों के बीच में जो भाग है, क्षय रोग, जिस को सिल और राज रोग भी कहते हैं वहीं से उत्पन्न होता है, और इस के सिवा अनेक दोष खड़े होजाते हैं।

इस से विदित होता है कि शरीर को न ढकने से पत तो उतरती ही है रोग भी घेर लेते हैं अब रहा रूप, इस को आप ही निहारिये कि आधी टागोंकी धोती से भली मालूम होती हो या जब शिर से पैर तक अच्छे २ कपड़े पहिनती हो?

इस पर कोई धोतीवाली लजा और झुंझलाकर जो यह कह उठे कि चौके में धोती बिना कैसे सरेगी, तो उसका प्रमाण भी शास्त्र से सुन लीजिये कि वह आप की पुनीति धोती अकेली वहां भी निषिद्धहै देखिये मनु अ०४ श्लो० ४५।

नान्नमद्यादेकवासा न नग्नः स्नानमाचरेत्।

अर्थात् एक वस्त्र को पहिन कर भोजन न करे और न नग्न होकर नहाये।

भविष्य पुराण के बारहवें अध्याय में ब्रह्मा जी का वचन सुनिये, जो कहते हैं कि "स्त्री रसोई बना के चौके से बाहर निकल कर शरीर का प्रस्वेद अर्थात् पसीना पोंछे, गन्ध, ताम्बूल, पुष्पों की माला और सुन्दर वस्त्रों से भूषित होके पति को भोजन के निमित्त बुलावे और प्रेम के साथ जिमावे, जिस पदार्थ में उसकी अति रुचि देखे उसे परसे" अब

कहिये आप की मैली कुचैली धोती का माहात्म्य क्या रहा जब स्वयं ब्रह्मा जी का यह वाक्य है कि उस को पहिने हुए पति को भोजन भी न कराये, अच्छे २ वस्त्रों से भूषित होके खिलाये और खाये।

इस लिये अपनी लाज, आरोग्यता, शोभा और धर्म सब की भलाई चाहो तो यह भोंड़ा और निर्लज्ज पहिराव छोड़ो ऋतु अवस्था और समय के अनुकूल सुथरे और सुन्दर वस्त्र जो जिस अंग में पहिरने चाहिये, इस प्रकार से पहिनो और ओढ़ो कि कहीं से निर्लज्जता न आने पावे, न कोई हंसे या टोके, मुख पर शोभा और गंभीरता जान पड़े और पैरों तक सारा शरीर ढक जाये, संखस्मृति का वचन है—

आगुळ्फाद्वासःपरिदध्यान्तस्तनौ विवृतौ कुर्यात्।

अर्थात् स्त्री पैर के गट्टे तक नीचे कपड़े पहिने, और उन के तले स्तन अपने कसे और दबाये रक्खे।

क्या तुमने मेमों का पहिरावा नहीं देखा कि गले से पैर के नाखूनों तक कैसी ढकी मुंदी रहती और किस उत्तम प्रकार से वस्त्र पहिनती हैं कि आंधी भी चले तौ भी कोई अंग उघारा होने नहीं पाता, और कपड़े उनके संगीन भी कितने होते हैं कि धूप क्या पानी भी न छन सके।

अब कोई उन नाजुक बदनोंसे पूछे कि जिनसे मोटी धोतियां संभाले नहीं संभलती, क्या यह मेमें धनवाली नहींहैं जो महीन कपड़े पहिन सकें, या शरीर उनका कोमल नहीं है जो मोटे कपड़े चुभें, यह तो दोनों गुण उनमें कहीं अधिक हैं, न तुम्हारे पास उतना धन, और न तुम को उनके बराबर सुख, जो तुम उनसे ज्यादा सुकुमार बनो, हां मूर्ख वह जरूर

नहीं हैं, वह समझती हैं कि कपड़ों के गुण क्या हैं, और क्यों कर ओढ़ना पहिरना चाहिये और तुम को इसका ज्ञान नहीं, वह अपनी बुद्धि और शिल्प विद्या के बल से नित्य नये २ प्रकार के वस्त्र बनातीं और पहिनती हैं, तुम अपनी मूर्खता और आलस्य से नई तरह निकालना तो दुर्लभ है, पुरानी चाल का जो पहिराव था वह भी छोड़ बैठीं।

इस पर तुम यह कहोगी कि मेमों का सा साया तो यहां कभी कोई पहिनता न था, धोती जो सदा सब पहिनते आये अब भी पहिनी जाती है। तो सुनिये मेरा यह अभिप्राय नहीं है कि आप भी साया पहिनिये और मेम साहिबा बनिये, मैंने केवल उनके सुघड़ और आपके फूहड़ पने को दिखाया है, मेरा यह मतलब कदापि नहीं है कि तुम उनकी नक़ल करो और न इसकी आवश्यकता ही है।

तुम्हारे यहां आपही भांति २ के कपड़े मौजूद हैं जिनसे वही हेतु निकलता है, और जो तुम्हारे बड़े आगे बराबर पहिनते थे और उनमें से अब भी कोई २ तुम बनातीं पर पहिनती नहीं हो, देखो लगभग सब उत्तम जातियोंमें बिवाह के समय जामे वा चौबंदी की नाईं जोड़ा किसीके यहां ससुराल और कहीं मैके की ओर से बनाया जाता और कन्याओं को कहीं फेरे और कहीं भांवरों और कहीं बिदाई के समय पहिनाया जाता है, जिससे बिदित है कि वह अगले समय का पहिरावा था जो अब सगुन मात्र के लिये बनता और संदूक पिटारों में तह करके रख दिया जाता है।

पंजाबी खत्रियोंमें यह जोड़े कमखाब, ज़रबफ्त, कारचोब

इत्यादि भारी भारी लागतके बनाये जाते और बरीमें सजाये जाते हैं, जनानी मिलनी जिसको और जाति वाले चौथी कहते हैं वहू इसको अवश्य और जब तक छोटी रहती त्यौहारों में भी बहुधा पहिनती हैं।

यह जोड़े किसी प्रकार साये से कम नहीं हैं और गुण भी वही रखते हैं कि शरीर भी सारा ढक जाये और रूप भी शोभायमान निकल आये।

काश्मीर देश में अब भी स्त्रियां टखनों तक नीचा पैरहन पहिनतीं और कमर में पटका बांधती हैं जो सायेका पूरा काम देता है, सिंध की औरतें घुटन्नों के ऊपर घुटनों से नीचे चौबन्दी और पंजाबिनें भी घुटन्ने, घेरदार लहँगे और बड़े २ कुरते पहिनतीं और ऊपर मोटे दुपट्टे और चादर ओढ़ती हैं।

अब आपही सोचिये कि लज्जा के निवारण को यह पहिरावे अच्छे हैं या आप की आधी धोती, जिससे न पेट छिपे न पीठ। यदि भलमनसी, मर्याद और रूप की शोभा चाहती हो, तो वही अपने विवाह और चौथीवाले जोड़े निकालो, और जो इस टुच्ची धोती ही से पत रहती और छवि बनती हो तो तुम जानो, परन्तु इतनी तो कृपा जरूर करो कि लम्बी, चौड़ी, संगीन, और पैरों के गट्टे तक नीची बांधो, नीचे तह बंद और गलेमें पूरी बाहोंका कमरसे नीचा सलूका और पावों में मोजे और जूती पहिनो।

* धनरक्षा *

पांचवां वकार विभव अर्थात् धन है जिसके बिना किसी कवि ने कहा है कि—

वरं वनं व्याघ्र गजेन्द्र सेवितं।
द्रुमालयः पक्व फलाम्ब भक्षणम्॥
तृणानि शय्या परिधान वल्कलं।
न बन्धु मध्ये धनहीन जीवनम्॥

वन में फिरना, बाघ और हाथी के मुहँ में जाना, वृक्ष के तले निवास करना, फल खाके जीना, घास पर सोना, छाल और पत्ते लपेटना यह सब श्रेष्ठ हैं पर निधन होके बन्धुओं में रहना अच्छा नहीं।

क्योंकि धन न होने से कोई बात नहीं पूछता, थोड़ी २ चीज के वास्ते सबके आगे हाथ पसारना और घिघियाना पड़ता है और अन्त को वह फल होता है कि—

दारिद्रात् ह्रियमेति ह्र परिगतःप्रभ्रश्यते तेजसी।
निस्तेजाः परिभूयते परिभवान्निर्वेदमापद्यते॥
निर्विन्नःशुचिमेतिशोकपिहितोबुद्धयापरित्यज्यते।
निर्बुद्धिक्षयमेत्यहो निधनता सर्वापदामास्पदम्॥

दरिद्रता से खिसियाना पड़ता है, खिसियाना होने से तेज जाता रहता, तेज न रहने से निरादर होता, निरादर से दुःख बढ़ता, दुःख से शोक होता, शोक से बुद्धि जाती रहती, बुद्धि न रहने से नाश हो जाता है।

इसी लिये तो कहा है कि–

जातिर्यातु रसातलं गुणगणास्तस्याप्यधोगच्छतात्।
शीलं शैलतटात् पतत्वभिजनः संदह्यतां वन्हिना॥
शौर्येवैरिणि वज्रमाशु निपतत्वऽर्थोस्तु नः केवलं।
येनैकेन बिना गुणास्तृणलवप्रायाः समस्ता इमे॥

अर्थात् जाति रसातल को चली जाय, गुण भी नष्ट हो जायँ, शील भी जाता रहे, परिवार भी भस्म होजाय, शूरता भी न रहे, धन अकेला बच जाये, क्योंकि इसके बिना कितने ही गुण क्यों न हों तिनके से भी तुच्छ समझे जातेहैं।

धन से बढ़कर संसार में दूसरा हितकारक पदार्थ नहीं, यह पराधीन होने नहीं देता, सारे दोष छिपाता और लोक परलोक दोनों बनाता है।

धनेन कुलीना कुलीना भवन्ति
धनैरापदो मानवा दुस्तरन्ति।
धनेभ्यो न किञ्चत् सुहृद वर्ततेऽन्यो
धनान्यऽर्जयध्वं धनान्यऽर्जयध्वम्॥

धन के होने से अकुलीन भी कुलीन होजाता और इसी की सहायता से मनुष्य विपत्ति से भी पार होता है धन से अधिक कोई हितू नहीं इसलिये धन को बटोरो बटोरो ।

लेकिन यह धन किसी को यों नहीं मिल जाता है उद्यम करने से हाथ आता और कौड़ी २ जोड़ने से इकट्ठा होता है, कमाना पुरुष का काम है और धरना उठाना स्त्री का काम है और यही मनुस्मृति में भी आज्ञा है कि—

अर्थस्य संग्रहे चैना व्यये चैव नियोजयेत् ॥

अर्थात् धन का जमा करना और खर्च का उठाना स्त्री के अधिकार में रहे और यह उसका काम है कि—

सु संस्कृतोपस्करया व्यये चामुक्तहस्तया ॥

घरकी चीज़ वस्तु संभाल के रक्खे और हाथ रोक के खर्च करे, इसलिये सज्जन स्त्रियोंको चाहिये कि चादर देख कर पैर फैलावें वृथा एक कौड़ी भी न उठावें, सावधानी के साथ सब काम करें और सब चीजों को आप देखें, दूसरोंके भरोसे न छोड़ें, जिस वस्तु को बिगड़ते पावें तुरन्त सँभालें, अन्न आदि सब हिसाबसे इकट्ठा मँगावें, रुपये पैसेका हिसाब लिखती जावें, किसी महीने में कोई खर्च ज्यादा पड़जाय तो कसर उसकी दूसरे महीनों में थोड़ी २ करके निकाल लें ।

जो आय हो उसके तीन भाग करें, एक समय कुसमय के वास्ते रक्खें, दूसरा व्यवहारमें लगावें और तीसरेमें नित्य का खर्च चलायें और जो आमदनी खर्च से अधिक न हो तौ

भी पैसा दो पैसा जो हो सके जरूर बचायें और जहां तक बने खर्चको कम किये रहें, जो काम आप कर सक्ती हैं उस में पैसा न लगायें, जैसे कपड़े कुछ जरूरी नहीं कि दर्जी ही सिये, बच्चों के अपने और जो स्वयं सी सक्ती हों आप सीलें और दर्जी की सिलाई बचायें।

मोजे, दस्ताने, गुलूबन्द, रूमाल, टोपियां इत्यादि आपही बना लिया करे, बाजार से जहां तक हो सके कभी न मँगावें, अपना कपड़ा और गहना संभाल कर पहिनें जिस में जल्दी फटने, टूटने घिसने और मैला होने न पाये, गृहस्थी के धंधे करने के समय भारी जोड़े और गहने पहिरे न रहा करें क्योंकि इस से वह बदरूप होजाते हैं और घिसते भी हैं, इस के सिवा गहना शृंगार की वस्तु है और उसी के समय इसके पहिरने की शोभा, या हरदम लादे रहनेसे सिवा हानि के कोई लाभ नहीं, और न शरीर को सुख, बल्कि देह तो और मैली हो जाती है विश्वास न आवे तो जरा अपने हाथ पैर निहार लीजिये कि कड़े छड़े इत्यादि की कालख कितनी जमी हुई है।

❀ सन्तान उत्पत्ति और १६ संस्कार ❀

अब स्त्रियों का जो मुख्य फल सन्तान उत्पत्ति है और जन्म से मरण पर्य्यन्त जो सोला १६ संस्कार मनुष्यों के होते हैं, उनमें से थोड़े से आवश्यकीय संस्कारों का वर्णन संक्षिप्त से यहां किया जाता है, (अधिक विस्तार से देखना हो तो महर्षि दयानन्द रचित संस्कारविधि और नारीधर्म विचार का द्वितीय भाग देखो) वह १६ संस्कार ये हैं—

गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ समावर्त्तन, बिवाह, वानप्रस्थ, सन्यास और अन्त्येष्टि ।

सब से पहिला संस्कार गर्भाधान है, उस के विधान से प्रथम जिस प्रकार अन्नादि बोने के निमित्त खेत का बल और बीज की उत्तमता देखी जाती है उसी भांति शास्त्र में लिखा है, देखो मनु अध्याय ९ श्लोक ३३—

क्षेत्र भूता स्मृता नारी बीज भूतः स्मृतः पुमान् ।
क्षेत्र बीज समा योगात्संभवः सर्व देहिनाम् ॥

स्त्री को खेत और पुरुष को बीजरूप समझ के दोनों का बल और वय [अवस्था] विचारना और यह देख लेना अवश्य है कि स्त्री रोगों से रहित, अच्छी तरह से तरुण [जवान] और गर्भ के धारण पोषण की पूरी सामर्थ्य वाली हो चुकी है या नहीं, और पुरुष भी आरोग्य और बलका पुष्ट है वा नहीं ।

जिस तरह पृथ्वी और बीज के दोष से अन्न अच्छा पैदा नहीं होता उसी तरह इन दोनों का बल और वय ठीक न होने से सन्तान, शरीर और इन्द्रियों की दुर्बल और आयु की क्षीण उत्पन्न होती है और जो दोनों बल के पोढ़े होते हैं तो मनुस्मृति का प्रमाण है —

"उभयन्तु समं यत्र सा प्रसूतिः प्रशस्यते"

कि अति उत्तम और प्रशंसित औलाद पैदा होती है ।

वैद्यकशास्त्र लिखता है कि १६ वर्ष से कम अवस्था तक स्त्री के तल पेट के हाड़ पूरे भर नहीं पाते न प्रसूति के योग्य उसका गर्भाशय बन पाता है। और जब तक देह के हाड़ अच्छे दृढ़ न होजायें और तल, पेट, मज्जा, तंतु और अस्थि बन्धन से पक्का न होले, तब तक बहुत से उपद्रव पैदा हो जाते और स्त्री को बालक उत्पत्ति में बड़ा भारी कष्ट होता है। इसी प्रकार २५ वर्ष से कम आयु वाले पुरुष का वीर्य भी लिखा है कि निर्बल रहता और उत्तम नहीं होता है। परम वैद्य धन्वन्तर मुनिके सुश्रुत का यह श्लोक है, कि—

पञ्चविंशे ततो वर्षे पुमान्नारी तु षोड़शे ।
समत्वागत् वीर्यौ तौ जानीयात् कुशलाभिषक् ॥

अर्थात् पच्चीस वर्ष का पुरुष और सोलह साल की स्त्री हो तब दोनों का बल और वीर्य बराबर होता है।

ऊन षोड़श वर्षायामप्राप्तः पञ्चविंशतिम् ।
यद्याधत्ते पुमान् गर्भा कुक्षिस्थः सविपद्यते ॥

अर्थात् सोलह वर्ष से न्यून स्त्री और २५ साल से कम अवस्था का पुरुष होने से गर्भ बिगड़ जाता है। परिणाम क्या होता है कि—

जातो वा न चिरंजीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः ।
तस्मादत्यन्त बालायां गर्भाधान न कारयेत् ॥

जो बच्चा पैदा भी होता है तो जीता नहीं, और जिया

भी तो शरीर से दुर्बल और इन्द्रियों का कमजोर रहता है, इसलिये १६ वर्ष से कम उमर वाली स्त्री में कभी गर्भाधान करना नहीं चाहिये।

इसके सिवा दूसरी योग्यता यह भी देखनी चाहिये कि संतान के पालन पोषण शिक्षा इत्यादि की सामर्थ्य है या नहीं, क्योंकि इसके बिना परिवार बढ़ाना मानो घोर दुःख और दरिद्रता को बुलाना है, संतान का सुख तब ही प्राप्त होता है जब धन धान्य से परिपूर्णता हो, खाने का ठिकाना नहीं और बच्चे जनते जायँ इस में कोई हर्ष नहीं होता नरक का दुख सहा जा सक्ता है पर बच्चों को भूखों मरते देखा नहीं जाता, इसी वास्ते कहा है कि धीः, श्री, स्त्री यानी पहले विद्या और ज्ञान द्वारा बुद्धि को बढ़ावे, फिर पुरुषार्थ कर धन पैदा करे तब विवाह करे।

❋ गर्भाधान विधि ❋

जब सब प्रकार से स्त्री और पुरुष दोनों समर्थ पाये जायँ, तब गर्भाधान का विधान इस रीति से किया जाय कि ऋतुकाल में (जो रजोदर्शन से १६ दिन रहता है और उन में से चार पहिली और ग्यारहवीं और तेरहवीं दो बीच की रात्रियां नष्ट और वर्जित हैं) जिस दिन स्त्री अच्छी तरह से शुद्ध हो जाय और रज रोग का लेश भी बाकी न रहे और न अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या वा पूर्णमासी तिथि हो, स्नान करके दोनो विधि पूर्वक [जैसा कि संस्कार विधि पुस्तक में वर्णन है] सुगन्धादि पदार्थों से दिन में हवन करें। और रात्रि समय सुन्दर और सुथरे स्थानमें जहां कोई मैली और

भयानक वस्तु तथा निन्दित तसवीर या भोड़े खिलौने इत्यादि कुछ न हों, और न उस रात में मेह या बादल, और न दोनों में से किसी के शरीर में जरा सा भी खेद या किसी प्रकार की चिन्ता और क्लेश न हो और न कोई नशा खाया हो, पहर रात्रि गये पीछे ऋतुदान दें। और उस समय मन अपना दोनों शुद्ध, शांत और अत्यन्त प्रसन्न रक्खें, और परस्पर प्रेम में मग्न रहें।

क्योंकि उस समय दोनों की जैसी अवस्था होगी, उसी के अनुकूल बच्चे का शरीर, स्वभाव, पुरुषार्थ और बल बनेगा, यदि आप दुखी होंगे तो बालक भी अवश्य ही दुखी उत्पन्न होगा।

❀ गर्भरक्षा ❀

गर्भ स्थिति हो जाने पर उस की रक्षा और ऐसे आचार रखने चाहियें, जिस से स्त्री आप भी सुखी रहे और बालक निरोग, निर्दोष, सुन्दर, बलवान, बुद्धिमान, विद्वान, यशस्वी और प्रतापी उत्पन्न हो।

रक्षा के हेतु गर्भिणी को चाहिये कि अपने शरीर का अच्छी तरह से यत्न करे, गर्मी और सर्दी दोनों से बचाये रहे, दुर्गन्ध के पास न खड़ी होवे, और न कोई कड़ी सुगन्ध सूंघे, साफ और सुथरी रहे, नित्य ठंढे जल से नहाये, गला मुख छाती सब खूब मलकर धोवे, गीले और मैले कपड़े न पहिने, और न ओछे और छोटेही हों, कमर भी बहुत न कसे न पेट दबने दे, क्योंकि इससे जनन-शक्ति में हानि और गर्भपात का डर रहता है।

धूल, मिट्टी, काष्ठ, पत्थर या और किसी प्रकार कड़े आसन पर कभी न बैठे और न विश्राम करे, घुटने टेक कर न बैठे, न कोयले, ठीकरे, ढेले या नाखून से जमीन खुचें या लकीरें बनाये, बाल भी सर के बिखरे न रक्खे, न भूत प्रेत की कहानियां सुने, सूने घर में या वृक्ष के तले भी न रहे, न मरघट पर जाय, गढ़े और कुयें भी न झांके और न दूर की वस्तु पर टकटकी लगावे ।

चटक और दौड़ के न चले, कोठों पर सँभलके चढ़े उतरे कूद फांद न करे, भुजा अपनी ऊंची न ताने, न भारी चीज़ उठावे, चिल्ला के न बोले और न जोर से हँसे, न बहुत जागे न बहुत सोवे, सबेरे सोवे और सवेरे उठे, दिन में भी एक दो घंटे लेट रहे, बिछौना मैला और बहुत गुदगुदा भी न रक्खे, ओढ़ना साफ़ और सोनेका स्थान भी सुथरा रक्खे पवन के आने के लिये रात को खिड़की केवाड़ थोड़े खुले रहने दे और पति से न्यारी और पैर धोके सोया करे ।

आहार में रूखा, सूखा, बासी पकवान और भारी चीजें जो पेट में चुभें और जल्दी हजम न होंवे, या वात, पित्त, और अग्निको बढ़ावें वा कफ़ पैदा करें कभी न खायें ।

हलका और पुष्ट भोजन करे, रात्रि में खाना कम खायें थोड़ा दूध एक उबाल देकर चीनी मिला कर पी लिया करें, और भोजन करने के पीछे पांच सात मीठे बादाम और माशे भर सौंफ भूसी निकाल और साफ़ करके खा लिया करें, इससे वायु दबती खाना जल्दी पचता और बहुत गुण होताहै ।

प्रथम कुछ दिनों थोड़ा आहार करें, जब गर्भ अधिक दिन का होजाय और फड़कने लगे तब आहार बढ़ादें और उलट पुलट कर खाया करें सदा एकही पदार्थ न खायें, शरीर में रुधिर अधिक हो तो आहार घटादें, क्योंकि खून ज्यादा होने से गर्भपात होजाता है, और कम हो तो पिछले तीन चार महीनों में पुष्ट चीजें खायें और बल को बढ़ावें।

बहुधा स्त्रियें ऐसी अवस्था में जब तब जो जी में आता खालेती हैं, विकारक वस्तुओं का खाना अच्छा नहीं जहांतक होसके उनपर इच्छा न चलावें, और किसी प्रकार जी न माने तो बहुतही थोड़ी खायें, मन को रोकने से पेट के बच्चेकी भी मन मारने की प्रकृति पड़ती है और दोनों अवगुण से भी बचते हैं।

वैद्यक में लिखा है कि बादी चीजों के खाने और बहुत आहार करने से बच्चा कुब्जा, अन्धा, गूंगा और ठिंगना पैदा होता है। और पित्त बढ़ानेवाली वस्तु के खाने से गंजा होने का डर रहता है। और कफ़कारक पदार्थों से रंग उस का पीला पड़जाता है और मदिरा पीना या और कोई नशा खाना भी मना है।

गर्भिणीके सामने कोई ऐसी वस्तु जो न मिल सक्ती हो या जो विकार करे, कभी न लाये और न उसकी चर्चा करे, क्योंकि उसका मन चला और वह न मिली तो गर्भपात या बच्चेके अंग भंग होजाने का बड़ा भय रहता है, और जो कदाचित उस का किसी ऐसी चीज़ पर मन चले जो तुरन्त न मिले, तो एक गिलास ठंढा जल पिला दे।

गर्भिणी व्रत और उपवास भी न करे और न कहीं लंबी यात्रामें जाय, रेलगाड़ी पर भी बहुत न चढ़े न अपनी सवारी की गाड़ी को ही तेज़ हांकने दे और पालकी वा डोली के कहारों को भी चटक चलने न दे।

आलसी भी न बन बैठे घर के काम धंधे किये जाय, क्योंकि श्रम न करने से कोठा अशुद्ध और शरीर शिथिल होजाता है, पेट का बच्चा निर्बल होता और स्त्री को जनते समय ठंढी पीर आती हैं, लेकिन बहुत भारी परिश्रम भी न करे न रात में देर तक सिये पिरोये, क्योंकि इससे भी बच्चे को अवगुण पहुंचता है, उस की छाती तंग होजाती और रतौंधी होजाने का भय रहता है।

गर्भिणी को उचित है कि क्रम से सब काम करे, क्रम से खाये, क्रमसे सोवे, क्रमसे धन्धे करे, शरीरको थोड़ा आराम दे और मनको बहलाये और रोग वा उतपातसे बचाये रहे।

दैवसंयोग से जो औषधि खाने का प्रयोजन पड़े तो बहुत कड़ी दवा न खाये, कोठे में मल भर जाय तो थोड़ा अंडी का तेल पीले, स्वाद से उसके डरती हो तो आधा गिलास ताज़ा दूध एक उबाल दिया हुआ गुनगुना ले और उसमें तेल इस ढंगसे डाले कि गिलास के बीचमें पड़े, कोरों से छू न जाय और तुरन्त एक सांस में पीलेवे।

दूसरी औषधि यह भी है कि दो तोले दाख (मुनक्का) और एक तोले गुलाबके फूल और दो तोले अंजीर, इन सब को मिलाकर इनकी चटनी या गोली बना रक्खे, और तीसरे

चौथे दिन एक सुपारी के अनदाज़ या आवश्यकता हो तो अधिक भी बड़े सबेरे या रात में सोते समय खालेवे।

पक्के अंगूर और भूने सेव भी कब्ज दूर करते हैं और लाल गेहूं के मोटे आटे की रोटी राब या कच्ची खांड़ वा छोटे चमचे भर सहत के साथ खाने या गौ का दूध कच्ची शकर मिला के पीनेसे भी मल शुद्ध रहता है।

एक और उत्तम उपाय यह भी है कि जब जरूरत हो पाव सेर से आध सेर तक गुनगुने जल की पिचकारी ले लेवे परन्तु यह नित्य न करे।

उबकाई और मतली आती हो तो काग़ज़ी नींबू का रस और चीनी थोड़े पानी में मिलाके पीने या बरफ के खाने से भी जाती रहती है। और जो इससे बन्द न हो, तो राई पानी में पीस कर कपड़े पर लगा के मेदे के ऊपर अर्थात् कौड़ीके नीचे चिपका दे और पाव घंटे पीछे जब चुनचुनी पड़े छुड़ा डाले।

चिरायता भी बड़ा गुणदायक है, उसको ६ या ७ माशे पाव सवापाव पानी में आधे घंटे तक भिगो दे, फिर छान के बोतल में भर रक्खे और आधी छटांक सबेरे और आधी छटांक सांझको पी लिया करे। दातोंमें दर्द हो तो दारचीनी या लौंग का तेल रुईकी फरहरी से जहां दर्द हो लगादे और जो दांत खुखले हों, तो रुई तेलमें भिगो के खुखले दांतमें रख दे और जो इससे दर्द न जाय तो बाबूना और पोस्ता की बुड्डी पानी औट कर उससे सेंके।

खांसी आती हो तो तवे पर मदार के आठ या सात पत्ते

इतने भून कि काले होजायें सफेद न रहने पावें और न हरे रह जायें, फिर उनको ६ माशे खारी नमक के साथ खरल करे और शीशीभर रक्खे, जब खांसी उठे एक या दो चुटकी बंगला पान में रक्खकर मुँह में रखले और धीरे २ अर्क उसका चूसे।

इसी तरहसे जब जो दुख हो साधारण इलाज करे और आठवें मास में बड़ी ही चौकसी रक्खे, परिश्रम कोई न करे, आहार भी बहुत हलका सूक्ष्म और थोड़ा खाये, नवें महीने किसी प्रकार का बोझा न उठाये, न बहुत बैठे न झुके और न करवट लेटे,चला अधिक करे पर ऊपर की तरफ बहुत और नीचे की ओर कम, जब थोड़े दिन रह जायें तो सात दाने अंजीर रोज खाया करे और कभी २ जरासा सहत भी चाट लिया करे।

बालकके सुन्दर और निर्दोष उत्पन्न होने का उपाय।

यह सब तो गर्भरक्षा के उपाय हुये अब वह यत्न सोचने चाहिये जिनसे संतान निर्दोष, रूपवान और गुणवान उत्पन्न हो, नहीं तो बालक हुआ जिया भी तो किस काम का।

यत्नके पद पर बहुतेरी स्त्रियां आश्चर्य करेंगी कि अच्छा और बुरा होना तो भाग्याधीन और परमेश्वरके हाथ है यत्न क्या बना सक्ता और हम कर भी क्या सक्ती हैं।

विधाता निःसंदेह मालिक है और अच्छे बुरे गुण क्या जन्म भी तो वही देताहै, पर जिसभांति उसने अपनी अद्भुत

रचनासे प्रजाकी उत्पत्ति के निमित्त स्त्रीको सांचा बनाया है, उसी तरह सुघड़ और असुघड़ बच्चा निकालना भी उसी सांचेके वश रक्खा है, अर्थात् जैसे अच्छे बुरे सांचे में अच्छे बुरे खिलौने ढलते हैं, वैसेही अच्छी बुरी स्त्री के अच्छी बुरी औलाद पैदा होती है और युक्ति इस में यह रक्खी है कि गर्भिणी के मन और चेष्टा का प्रतिबिम्ब (परछाईं) बच्चे के आकार पर पड़ता है, जो विचार उस के मन में उठते और जिस विषय में उसका ध्यान विशेष रहताहै उसीके अनुकूल बच्चे की सृष्टि पड़ती और वैसेही प्रकृति और स्वभाव उस का बनता है।

यहां पर समझने के लिये एक बड़े विद्वान वैद्य के रचे ग्रंथ से एक दृष्टांत नीचे लिखा जाता है-

"एक उत्तम कुलके लड़केका स्वभाव चोरी करने का जन्म से पड़ा था, हित, मित्र, पड़ोसी, नातेदार, जिसके घर जाता और जो पाता चुरा लेता था, कई बार लोगों ने बड़े आदमी का लड़का जान के छोड़ २ दिया और उसके माता पिता ने बहुतेरी ताड़ना भी दी परन्तु उसकी लत न छुटी और अन्त को एक दिन सेंध लगाते पकड़ा गया और क़ैद हुआ, वैद्यजी ने एक समय उस की माता से पूछा कि तुझे कुछ याद है कि जब यह पुत्र तेरा गर्भ में था, तूने कभी चोरी या चोरी की कांक्षा भी की थी।

उसने याद करके कहा कि हां एक दिन रसभरी खाने पर उसका जी ऐसा चलायमान हुआ था कि जब उसकोकहीं न मिलीं तो वह अपने पड़ोसी की बाड़ी से चुरा लाई और

इस का ऐसा चसका पड़गया कि वह नित्य रात्रि को जाती और तोड़ लाती थी, एक रात्रि में किसी ने तोड़ते देख भी लिया था और उस समय मारे भय के बच्चा भी पेट में उछल पड़ा था।"

देखो माता के दोष से बच्चा भी चोर निकला और ऐसा भारी दुष्ट हुआ कि जब २ ताड़ना पाता पछताता और कहता था कि फिर कभी न करूंगा, पर वह लत तो उसके स्वभावमें पड़ी थी क़ैद तक जाने से न छुटी।

ऐसेही और भी बहुत से दृष्टान्त हैं कि जैसी गर्भिणी के मन की चंचलता और शरीर की व्यथा होती है वैसा ही बालक उत्पन्न होता है।

एक और वैद्यक ग्रन्थ में डाह और विरोध रखने का प्रभाव मैंने पढ़ा है, कि जो गर्भिणी वैर और ईर्षा रखती है उसका बच्चा भी उसी दुष्ट स्वभाव का पैदा होता है, दृष्टान्त जो उस में लिखे हैं उनमें से एक यह है, कि—

"एक स्त्री के दो लड़कियां थीं छोटी तो अति प्यारी, हँसमुख सूधी और भोली भाली थी, परन्तु बड़ी कन्या महा कुचित्त, कुटिल, हठी, और उपाधी थी, दुष्टा अपनी छोटी बहिन से बिना कारण जलती, उस को नित्य मारती धक्के देती, आंखों में मिट्टी झोंकती, चुटकी काटती सुई गड़ो देती और जब वह विचारी पीड़ा से रोती तो आप अलग खड़ी होके हँसती थी, मां कुछ कहती या डांटती तो उस पर आंख झकालती, और मारने को दौड़ती।

इस के दुष्ट चलन से सारा घर और अड़ोसी पड़ोसी तक कि उनके बच्चों को भी सताया करती थी दुखी होगये थे, यह आचार देखकर वैद्यराज ने पूछा कि तेरी दोनों लड़कियों का एक दूसरे से विरुद्ध स्वभाव का क्या कारण है, उस ने कहा मैं नहीं जानती क्यों परमेश्वर ने बड़ी का ऐसा दुष्ट स्वभाव बनाया है, वैद्य जीने पूछा कि जब यह दुष्टा गर्भ में थी तेरा क्या हाल था, उस ने कहा कि मैं उस समय महा खेद में रहती थी मेरा स्वामी उन दिनों एक और स्त्री से हित रखता था और जो कमाता उसी को देदेता था, मैं रात दिन इसी शोक में जला करती थी, एक दिन मारे डाह के जब मुझ से न रहा गया, मैंने चाहा कि उसके घर जाकर उसे मारूं पर मेरे पति ने किसी भांति भांप लिया और मुझे डरआया कि मैने कोई बात की तो वह मुझ को जानसे मार डालेगा, अपनी जान के डर से मैं कुछ न कर सकी, और रात दिन डाह की आग में जला की, यह सुनकर वैद्यजी ने पूछा कि क्या छोटी कन्या के गर्भ समय भी वही गति रही, उसने कहा नहीं बड़ी के जन्म से थोड़े ही दिन पीछे वह कहीं चली गई, और आज तक पता नहीं क्या हुई, मेरा चित्त तब से शान्त हो गया, क्लेश सब जाता रहा।

वैद्यराज बोले अफ़सोस! जो वह स्त्री पहलेही चली गई होती तो बड़ी लड़की भी दोषों से बच जाती, इस पर वह चौंक उठी और बोली कि क्या यह उसी के फल हैं! जो यह इतनी दुष्ट उत्पन्न हुई और मुझ को दुख भोगने पड़े?

वैद्यजी ने कहा इस में संदेह नहीं, क्योंकि उस समय

तेरे मन में सौत को मारने के विचार उठा करते थे, डाह और ईर्षा तेरे रुधिर में समा गई थी, और उसी रुधिर से गर्भ का पालन होता था।"

इसी प्रकार एक और स्त्री का वृत्तांत सुनिये कि उस को भी सौत का सामना पड़ा और संयोग से उन्हीं दिनों गर्भ भी रह गया, परन्तु स्त्री लिखी पढ़ी और बुद्धिमान थी, सोची कि जो मैं मन में खेद रखती और क्लेश मानती हूं तो इसी दोष से बालक मेरा दूषित हो जायगा, यह विचार कर उसने अपने चित्त से ईर्षा निकाल डाली और परमेश्वर से प्रार्थना की कि मुझे शान्ति दे, डाह और विरोध मेरे पास न आये, वह सर्वकाल में हर्ष और आनन्द के साथ अपना धंधा देखती थी कभी कोई चिन्ता और विवाद न करती, और रात दिन प्रसन्न चित्त रहती थी।

दिन पूरे होने पर उसके अति रूपवान पुत्र उत्पन्न हुआ, और स्वाभाविक प्रकृति उसने ऐसी उत्तम पाई कि दिनों दिन शोभा उसकी बढ़ती गई, अपने पराये सबके साथ वह स्नेह रखता और अपनी माता की जिस ने पित्ता अपना मार के उसको सुन्दर और निर्दोष जना था, तन मनसे सेवा करता था।

इन दृष्टांता से अच्छी तरह विदित है कि सन्तान का भला बुरा उत्पन्न होना केवल गर्भिणी के आचार आधीन है, जैसे उसके चलन होंगे वैसी ही औलाद पावेगी इस लिये उस को अत्यन्त आवश्यक है कि सिरे ही से इसका पूरा यत्न करे, अर्थात् दुष्ट कर्मों को त्याग दे, हंसी ठट्ठे में भी कभी

झूठ न बोले, कितनी ही दुखित हो पराई वस्तु कभी न छुये, किसी के साथ कलह और विवाद न मचाये, कोई क्रोध भी करे बुरा भी कहे अपने माथे पर बल तक न पड़ने पाये।

डाह ईर्षा बैर विरोध समीप न आवे, चिन्ता और क्लेश से दूर भागे, शोक के पड़ोस भी न जाये, लोभ और भय कभी मन में न लाये, निन्दा और बुराई का कभी नाम न ले, और आलस्य को पास फटकने न दे, नहीं तो यह सब अवगुण बच्चे के स्वभाव में पड़ जायँगे और रोगी, दुर्बल पीड़ित और हठी भी उत्पन्न होगा।

गर्भिणी को रति करना भी शास्त्र में निषेध किया और लिखाहै कि उस दोषसे बालक अति कामी और व्यभिचारी उत्पन्न होता है, और इसके भी बहुत से दृष्टांत मौजूद हैं जिन में से एक यह है—

"दो स्त्रियों में छुटपने से अत्यन्त स्नेह था, दोनों एकही ग्राम में रहती भी थीं, और संयोग से एकही बस्ती में और एकही दिन दो कुलीन और भाग्यवान पुरुषों को बिवाही भी गईं, और थोड़े ही दिनों के आगे पीछे दोनों के गर्भ भी रह गया, इनमें से एक तो बुद्धिमान् और गर्भवती धर्म को अच्छी तरह जानतीथी उसने अपने आचार सब शुद्ध रक्खे।

दूसरी थोड़ी मूर्ख थी भोग रागमें लीन रही, दैव संयोग से दोनों के कन्या उत्पन्न हुई, जिन में से बुद्धिमानवाली तो अति सुशील और सुन्दर आचरण की निकली, पर दूसरी महा चंचल और छुटपने ही से चितवनों की बुरी और अंत को यह दुष्टा अभी पूरी युवा अवस्था को भी नहीं प्राप्त

हुई थी कि घरसे भाग गई! और माता पिता को लज्जित किया" !!

इससे गर्भिणी को उचित है कि अपने धर्म पर चले दूषित और निन्दित कर्मों से बची रहे, और कोई ऐसी बात न करे जिसमें बालक के शरीर प्रकृति, बल और बुद्धि में किसी प्रकार का दोष उत्पन्न हो, उसको चाहिये कि सदैव सच और मीठा बोले, हंसमुख स्वभाव रक्खे, सब से झुक कर मिले प्रेम और प्रीति से वर्ते, सावधानी से घरके धंधे करे, और आठोंपहर शांत चित्त हर्षित और प्रसन्न बनीरहे।

हर्षित रहनेसे वैद्यक शास्त्र लिखताहै कि फेफड़ा फैलता और बालक सुन्दर सुशील, पुष्ट और निरोग पैदा होता है, शोक करने से श्वास घटती और बच्चे में कातरता आजाती है, आलस्य से कुरूप और टेढ़ी मेढ़ी वस्तुओंका नित्य ध्यान करने से अंगहीन उत्पन्न होने का डर रहता और काली कलूटी बदशकल मूर्ति को उठते बैठते निहारने से रंग और रूप बिगड़ जाता है, इसी वास्ते ऐसी वैसी चीजों को विशेष कर शयन भवन में रखना निषेध किया और कहा है कि सो के उठकर स्त्री प्रथम अपने स्वामी का दर्शन करे और सदा उत्तम श्रेष्ठ और प्रिय वस्तु को देखे, और सुन्दर २ फूलोंको निहारे और विचारे कि किस रंग और रूपका बालक कितना सुहाना और प्यारा मालूम होता है, बड़े २ विद्वान् यशस्वी और समर्थ पुरुष और सुन्दर सुशील बुद्धिमान और लक्ष्मी स्वरूप स्त्रियोंकी तसवीरें घरमें लटकाये और उनमें से जिस रंग रूप और गुण के बालक की चाहना करती हो, उस का

रूप ध्यान पर चढ़ाये और उसके गुण और सुकीर्ति का मनन किया करे, ऐसे उपाय से वही रंग, वही रूप, वही गुण और वही प्रकृति बहुधा बच्चे में आजाती है जैसा कि इस दृष्टांत से विदित होता है–

एक महाशय के घर में कोई मित्र उसका एक दिन गया और कमरे में एक अति सोहनी तसवीर देख के प्रशंसा की कि तेरे पुत्र की यह तसवीर बहुत ही ठीक उतारी गई है, महाशय ने कहा कि तसबीर तो मेरे पुत्र की नहीं है, पर हां वह इस आकृति का अवश्य बनाया गया है, मित्र ने पूँछा क्यों कर तव महाशय ने बतलाया कि जब मेरा पुत्र गर्भ में था मां उसकी इस सोहनी तसवीर को नित्य निहारा और बड़ी सराहना के साथ इसी रूप का मनन किया करती थीं, उसी के प्रभाव से बच्चा इसी के सदृश पैदा हुआ और यही सारा रंग और रूप उसने पाया।

इसी तरह एक और इतिहास में लिखा है कि एक मेम के शयनस्थान में किसी हबशी की तसवीर पलंग के सामने इस हिसाब से टंगी थी कि लेटते बैठते दृष्टि उसी पर पड़ती थी जिसका फल उसने यह पाया कि उसी काली रंगत और भोंड़ी सूरत का पुत्र उसके उत्पन्न हुआ।

बहुत से बच्चे सुन्दर सूधे और मधुर स्वभाव के होते और लिख पढ़ भी जाते हैं, परन्तु बुद्धि उनकी चटक नहीं होती, यह दोष भी वह अपनी माता ही से पाते हैं कि वह गर्भ अवस्था में अच्छे २ विचार जिन से बुद्धि प्रबल हो और ज्ञान आवे सोचा नहीं करती है, गर्भवती को चाहिये कि

विद्या और उत्तम गुणों का बड़ा प्रचार रक्खे, ज्ञान और उपदेश की पुस्तकों को बराबर पढ़े और अच्छी बातों का सदा मनन किया करे।

अच्छी २ पोथियों के पढ़ने और उन पर विचार करने का जो उत्तम फल मिलता है उस का भी एक दृष्टान्त सुन लीजिये।

एक स्त्री के कई औलाद थीं जिन में सब से छोटी कन्या तो अति सुन्दर, सुशील, विद्वान और बुद्धिमान थी, बाक़ी सब महा कुरूप और अनपढ़, इन को देखकर कोई नहीं कह सक्ता था कि वह सुन्दरी उनकी सगी बहिन है, नाम इस कन्या का मोहनी था और जैसा नाम था वैसाही गुणभी रखती थी, उस के हँसमुख स्वभाव, मधुर वाणी और स्नेह भरी बातों से अपने पराये सब उसके साथ हित रखते और मां तो उसकी इच्छाही पर चलती थी।

एक उत्तम कुल की धनवान स्त्री को बड़ा अचम्भा हुआ कि ऐसे भोंड़े कुरूप और नीच घर में इस चांद सी सूरत लक्ष्मी मूरत साक्षात् सरस्वती ने क्योंकर जन्म लिया यह बहुत दिनों तक इसी खोज में रही और समय पाकर एक दिन बातों २ में मोहनी की माता से पूछही बैठी कि यह सुन्दरी तूने कहां से पाई? भंग में तुलसी कैसे जमाई?

उसने कहा कि यह परमेश्वर की देन और मेरी अच्छी कमाई का फल है, जिस ग्राम में मैं पहले रहती और मोहनी गर्भ में थी, एक बिसाती कुछ सौदा बेचता हुआ आया, उस के पास एक बड़ी प्यारी सुनहरी जिल्द बंधी हुई काव्य की

पोथी थी जिसमें एक अति सुन्दर सुशील और विद्वान स्त्री का इतिहास और उसकी तसवीर भी बनी थी देखते ही मेरा जी उस पर लोट गया।

दाम जो पूछे तो उसने २) मांगे, मेरे पास भी उस समय दो ही रुपये थे सोची कि पोथी लेती हूं तो खर्च की तकलीफ होगी आह! खींच कर चुपकी हो रही पर जी में ऐसा मसोसा उठा कि सारी रात नींद नहीं आई, और अन्त को यही ठान ली कि भूखों चाहे मरूँ परन्तु पोथी ज़रूर लूंगी, ज्यों त्यों करके रात काटी और सवेरा होते ही, बिसाती की खोज में निकली और ढूंढ कर पोथी उस से लेही ली।

जब मैं गृहस्थीके धंधोंसे छुट्टी पाती उसको ले बैठती थी और ऐसा रस मुझे उसके पढ़नेमें उत्पन्न हुआ कि उठते बैठते उसी में ध्यान लगाये रहती, कोई काम करती वही चरित्रजो उस में वर्णन थे और यही सोहनी सूरत आंखों के सामने फिरा करती और पढ़ते २ सारी पोथी कंठ होगई थी, दिन पूरे होने पर मोहनी का जन्म हुआ और ईश्वर की अदभुत रचना और माया से इसने वही रूप, रंग, वही सारे गुण और वही लक्षण पाए, बालहीपन से इसकी लिखने पढ़ने में ऐसी रुचि बढ़ी कि थोड़ेही अवस्था में यह निपुण होगई, और एक पाठशाला में पढ़ाने लगी, काव्य में भी इसको बड़ा रस है। और अनेक गुणों में सम्पन्न, सारे कुटुम्ब को यही पालती और मेरे तो आंखों की तारा और जीवन का सहारा है।

देखती हो कि वही मोहनी की मां थी जिसने और बालक

भी जने थे और बाप भी सबका एकही था, फिर जब खेत भी एकही रहा और बीज भी वही, तो फल भी सब एकसे क्यों न उतरे ?

भेद इसमें केवल यही था कि औरों के बोने पर खेत कमाया नहीं, गया था और इस की बेर कमाई अच्छी हुई उत्तम विचारों से मन शुद्ध और बुद्धि निर्मल की गई ज्ञानसे बुरी बातों पर ध्यान दौड़ने न दिया और रुधिर में किसी प्रकार का मैल आने नहीं पाया, स्वच्छ रक्त ने गर्भ की पालना की और समझ बढ़ाई।

गर्भवती के भले बुरे बिचार और मनन शक्ति का फल जैसा वैद्यक शास्त्र ने दर्शाया वैसाही मनुस्मृति में भी कहा है किः—

यादृशं भजतेहि स्त्री सुतं सुते तथा बिधम्

अर्थात् जैसा स्त्री का ध्यान रहता है वैसी ही संतान उत्पन्न होती है।

और जो वैद्यक मतवालों ने उत्तम सन्तान होने के वास्ते यत्न और उपाय करने का उपदेश किया है उसी हेतु और आशय से ऋषि दयानन्द ने अपनी बनाई संस्कार विधि पुस्तक में गर्भस्थिति ज्ञान होने के दूसरे अथवा तीसरे मास में पुंसवन संस्कार, और गर्भ मास से चौथे महीने में अथवा छठे आठवें महीने में सीमन्तोन्नयन संस्कार विधी पूर्वक यज्ञ सहित किये जाने की आज्ञा दी है।

जिसमें गर्भ स्थिर और स्त्री आरोग्य और प्रसन्न बनी रहे।

यज्ञ की जितनी सामग्री हैं उनसे हवन करने में जितना विकार हवा में रहता सब दूर हो जाता है, रोग पास आने नहीं पाते, देह में बल बढ़ता चित्त अत्यन्त प्रसन्न रहता और वेद मंत्रों के पाठ और ईश्वर के ध्यान से मन शुद्ध होता और ज्ञान बढ़ता है, इन सब संस्कारों में उत्सव भी किया जाता है, हित मित्र नातेदार सब इकट्ठे होते और गाना बजाना भी होता है, जिस से गर्भिणी का मन बहलता और जी खुश रहता है ।

इसलिये अत्यन्त आवश्यक है कि जिस भांति अन्नादिकों की वृद्धि और उत्तमता के हेतु खेत जब २ बोते बराबर सींचते और निकाते रहते हैं, उसी तरह गर्भ भी जब २ रहे श्रेष्ठ सन्तान उत्पन्न करने के निमित्त यह सब संस्कार और उपाय जो बताये गये हैं अवश्य किये जावें, और गर्भिणी अपनी देह को शुद्ध और मनको पवित्र रखने का बराबर यत्न करती रहे, विद्या के अभ्यास और ज्ञान के चर्चा से बुद्धि को बढ़ावे, अच्छे २ विचार मन में लाये और बुरी बातों पर कभी ध्यान न जमाये ।

❀ सोअर और जच्चा ❀

प्रसव का समय आने से पहिले सूतिकागृह (जच्चा खाना) और दाई इत्यादि का बंदोबस्त कर रक्खा जाय, जच्चाखाना अन्धेरी कोठरी या मैले और बंद मकान में न बनाया जाय, सुथरा और ऐसा घर हो जिस में न बहुत उजियाला पहुंचे न ज्यादा ठंढ, और न अधिक गर्मी और न

उस मकान में सर्दी ही हो, पवन के आने जाने का अवकाश रहे जिस से मंद २ हवा आवे और देह में बल बढ़े।

दाई भी जो रक्खी जाय वह अपने काम में निपुण और हथौटी की अच्छी और सुघड़ हो और स्वभाव की भी हँस मुख होना चाहिये।

पीरें जब लगें उस समय जाया के घर में दाई समेत दो वा तीन से अधिक स्त्रियां न रहने पावें, और वह सब संतान वाली, दयालु और हंसमुख हों, कोई उस समय चिल्ला के न बोले, न हिये हारने वाली बातें या दूसरों के कठिन जायों का चर्चा करें, सब मीठी ५ बातें करें ढाढस बंधाये और बहलायें, पीर बंद हो जाय तो सब चुप होरहें, और सच्ची पीर जब आने लगें बाईं करवट लिटा दें और पेट मलें, परन्तु जब तक सच्ची पीरें न आवें लिटाना नहीं चाहिये किन्तु उस समय तक टहलाना ही लाभकारी होगा।

बच्चा पैदा होने और अंवल निकल जाने के पीछे जच्चा का अंग गर्म पानी से अच्छी तरह धो और पोछ कर पेटके नीचे गद्दी रखकर चौड़ी पट्टी बांध दें और चित्त लिटा के सोने दें।

चार पांच दिन तक जच्चा बहुत उठाई बिठाई न जाय दस पंद्रह दिन बैठने और बोलने कम पाये, सांधी ज्यादा लेटी रहे, और पेट से पट्टी भी बीस बाईस दिन बराबर बांधी जाय।

जच्चा मैली भी न रहने पावे, देह उसकी नित्य धोई जाय ओढ़ना बिछौना सब साफ़ रहे, कोई मैली वस्तु उस के घर में या बिछौने के तले कभी रहने न पावे।

❀ जातकर्म संस्कार ❀

बालक उत्पन्न होने पर जो बच्चे की नार काटी जाती और उस समय शास्त्र अनुसार जो क्रिया होती है उसी को जात कर्म संस्कार कहते हैं

जब प्रसव होने का समय आवे तो तीन मंत्रों से जो कि संस्कार विधि में लिखे हैं, गर्भिणी के शरीर पर जलसे मार्ज्जन करे, जब संतानका जन्म होवे तब प्रथम दाई आदि स्त्रियां बालक के शरीर का जरायु पृथक कर मुंह नाक कान आंख आदि में से मल को शीघ्र दूर कर कोमल वस्त्र से पोंछ शुद्ध कर पिता की गोद में बालक को देवें।

पिता जहां वायु और शीत का प्रवेश न हो वहां बैठ के एक बीता भर नाड़ी को छोड़ कर ऊपर सूत से बांध के उस बंधन के ऊपर से नाड़ी छेदन करके किंचित उष्ण जल से बालक को स्नान करा शुद्ध वस्त्र से पोंछ नवीन शुद्ध वस्त्र पहिना कर फिर संस्कार विधि के अनुसार यज्ञ आदि क्रिया करे।

और घी तथा सहत बराबर मिला के सोने की सलाई से बालक की जीभपर "ओ३म्" यह अक्षर लिख के उसके दाहिने कान में "वेदोसीति" यह शब्द सुना दे कि तेरा गुप्त नाम वेद है, ऐसा सुनाके पूर्व मिलाये हुये घी और सहतको उसी सोने की सलाई से बालक को थोड़ा २ चटावे, और फिर शुद्ध वस्त्र उढ़ाकर लिटादे इस को जातकर्म वा उत्पन्न होने का संस्कार कहते हैं।

❀ नहलाना धुलाना ❀

बच्चे की देह में बेसन अथवा साबुन लगाकर और गुनगुने जल में प्रथम फ़लालीन का टुकड़ा भिगोकर उस से अच्छी तरह धोये, धोने में अधिक देर न लगाये और वायु वा शीतका बचाव रक्खे, नहलाने के पश्चात् साफ़ कपड़े से उस का शरीर खूब पोंछ दे कि पानी का अंश भी न रहने पावे। फिर झट पट कपड़े पहना और उढ़ा गर्म बिस्तरे पर लिटा दे, इसी भांति नित्य प्रति नहलावे, और छाती, पीठ आंत और हाथ पांव सब धीरे २ दबाये, और हवा से बचाये रहे।

जब बच्चा डेढ़ दो मास का हो जावे और सुकुमार जान पड़े तो नहलाने के जल में थोड़ा सा खाने का निमक मिला दिया करे, और उसी पानी से नहलाया करे, और कुछ दिन बाद ठंडे जल से भी नहलाने का अभ्यास डाले।

जल से कभी भय न करे, यह शरीर के विकारों को दूर और रग, पट्ठे और बुद्धिको प्रबल करता है, नहलाने धुलाने और साफ रखने से बच्चा निरोग रहता और पुष्ट होता है, आत्मा उस की सुख पाती है, स्वास लेने में सुगमता होती, और स्वभाव भी उसका मधुर होजाता है।

बालक जब पसीने में डूबा या सर्दी से जकड़ा हो उस समय कभी न नहलावे, न जब थकित हो वा दस्त आते हों; तुरन्त खिलाने के बाद भी न नहलाये, और न नहला के तुरन्त धूप में भी दौड़ने दे।

❋ दूध पिलाने की विधि ❋

जब प्रसूता जननेके श्रम से चेते और प्रसन्न चित्त होले और दूध भी उतर आवे, तब स्तन उसके गर्म जलसे धो और पोछ के प्रथम दाहिना फिर बायां स्तन बच्चे के मुख में दे, परन्तु दूध न उतरे तो ऐसा कभी न करे, क्यों कि इसमें स्त्री के स्तन सूज और पक जाने, और बच्चे का मुंह फफल आने और त्वचा रोग उठ खड़े होने का डर रहता है।

दूध न उतरने से २४ घंटे तक बच्चे को कुछ न मिले तो चिन्ता नहीं, इसके उपरान्त एक हिस्सा गौ का ताजा दूध और दो हिस्सा पानी मिला और हलका उबाल देकर चुटकी भर कंद और जो दस्त न आया हो तो कच्ची खांड़ मिला के थोड़ा २ दे और जिस शीशी से पिलाये उसको अच्छी तरह धो और पोछ डाले और जो दूध उसमें बचे फेंक दे। दूध बच्चे को पूरा चित्त लिटाके न पिलाये ऊपर का धड़ उठा रक्खे जिसमें रद न होजाय।

दूध उतरने पर बच्चा छाती मुख में न ले तो कुचों पर थोड़ी मलाई मल दे, और दूध इस क्रम से पिलावे कि प्रथम मास में डेढ़ २ घंटे पीछे, द्वितीय में दो २ घंटे बाद और इसी प्रकार ज्यों २ बालक बढ़ता जाय त्यों २ देर कर करके यहां तक कि अंत में चार ४ घंटे के उपरांत दे और समय बांध रक्खे, यह नहीं कि जबही रोये पिलाने लगे।

रात को बेर बेर न पिलाये, दूर से चलकर आतेही और पसीना सूखने से पहले भी न दे, जब शरीर ठंढाने पर आवे

परन्तु बिल्कुल ठंढा भी न होजाय तब पिलावे। जब २ दूध पिला चुके छाती धो अथवा गीले अँगोछे से पोंछ डाले दिन में बैठके और रातमें लेटकर पिलाये, आधी लेटी और आधी बैठी हुई कभी न पिलाये, पर फेर के दोनों छातियां देवे प-कही से पीने का ढब न डाले।

जब स्त्री क्रोधित अथवा भयमान हो उस समय कभी न पिलाये, क्रोध से दूध में बिष उत्पन्न होजाता है, और नीचे लिखे बंधेज करे।

गर्म और कुपथ्य पदार्थ न खाये, थोड़ा और साधारण आहार करे, कोठा शुद्ध रक्खे, व्रत उपवास न करे क्रम से खाये और क्रम से सोये, अपाहज न बने चले फिरे घर के काम धंधे देखे, चोली ढीली पहिने चित्त में रोस न लाये, शोक न करे, स्वभाव शांत और मनको प्रसन्न रक्खे, उदास न रहे।

पति से न्यारी सोये, राग भोग छोड़ दे, केवल बच्चे की हो रहे, और विशेष कर जब तक दूध पिलाये गर्भवती होने से अपने आप को अवश्य बचाये रहे।

बहुत सी स्त्रियां दूध पिलाने में अपनी हेठी समझती और बच्चे को धाय पर छोड़ देती हैं, ऐसी मां महा अपराधी और पूरी निर्दयी होती हैं, माता का धर्म है कि सारे सुख बच्चे के वास्ते त्याग दे और अपने आप दूध पिलाये, जो मां दूध नहीं पिलाती उस मां और बच्चे में स्नेह भी कम हो जाता है। और दूधके पिलाने से केवल बच्चेही को लाभ

नहीं स्त्री को भी सुख होता है, इस से वह आरोग्य रहती, शरीर में बल बढ़ता, और गर्भपात का डरभी कम रहताहै।

दूध के न होने वा मांदगी के कारण से जो धाय रखना पड़े तो उस की गोद में भी बच्चा उसी उमर का हो, परन्तु पहलौटी का न हो, और उसके दूध की भी परीक्षा करली जावे, कि पानी में डूबता या स्वाद का खट्टा वा कड़वा, और रंगत में काला या पीला तो नहीं है, और न उस में चींटी डालने से मरती है।

जो धाय रक्खी जाय दूध उस में बहुत हो और पतला हलका, रंगत में सफेद और नीला झलक देता हुआ हो। स्तन भी उसके लम्बे ऊंचे और कड़े हों, गर्भ से भी न हो, और न मोटी न बहुत दुबली हो, सूरत शकल की अच्छी, आचरण की शुद्ध, स्वभाव की हंसमुख, बोली की मीठी और काम काज में सुघड़ और फुर्तीली हो, मैली और घिनौनी न हो, रोगी और न रोगी कुल की ही होवे।

बच्चे को गाय का दूध देना पड़े तो प्रथम मास में एक हिस्सा दूध और दो हिस्सा गर्म पानी, दूसरे और तीसरे महीने आधा दूध और आधा पानी, चौथे मास में दो हिस्सा दूध और एक हिस्सा जल, इस के उपरान्त केवल टटका दूध एक उबालदे और ज़रा सा नमक और चुटकी भर कंद या दो तीन बताशे मिलाकर पिलाये, लवण मिलाने का हेतु यह है उस के सबब से बच्चे के पेट में कीड़े नहीं पड़ते।

दूध कुछ बादी करे तो एक चमचा चूने का पानी मिलादे और दस्त न आते हों तो सवेरे जब बालक सोके उठे, एक

चमचा ठंडा जल पिलाये और दूध में कंद की जगह कच्ची खांड मिलाये, और यदि इस से भी दस्त खुल के न आये तो चौथाई अथवा आधा चमचा सहत चटाये।

जहां तक बने दूध बच्चे को एकही गौका दे और शक्ति हो तो गाय पालले, और आहार में उसको केवल घास और भूसा खिलाये, दाना न दे।

जो स्त्री अपने बच्चे को आप दूध पिला सक्ती हो वह कम से कम नौ महीने अवश्य पिलाये, पर हां अति निर्बल हो तो छठे महीने छुड़ादे, परन्तु एक दफ़े नहीं पहिले रातका पिलाना बंद करे, फिर कुछ दिन पीछे सवेरे सांझ पिलाये और धीरे २ करके छुड़ा दे।

❋ निद्रा ❋

बच्चे जितना सोयें अच्छाहै, सोनेसे वह बढ़ते और मोटे होते हैं, सोते बच्चे को जगाना उचित नहीं, न सोते समय उसको झुलाना योग्य है, क्योंकि इसमें एक तो ज्वर आजाने का डर रहता है, दूसरे अभ्यास पड़जाने से बिना झुलाये वह सोता नहीं।

खिड़की दर्वाज़े सब बंद और मुँह ढांप करके सुलाना अवगुण करता है, सिर और मुँह उसका खुला और घर में हवा के जाने का निकास रखना चाहिये।

जिस घर में बच्चे को सुलाये, वहां बहुतसा असबाब और विशेष कर खाने पीने की तो कोई वस्तु न रक्खे, बि-

छौना उसका मैला न रहे चादर और तकियोंके गिलाफ़ नित्य धोये और बदले जायें।

छोटी खाट पर बच्चे को साथ लेकर कभी न सोये बड़े पंलग पर सोया करे, जिसमें उसको बहुतसी जगह मिले और एक की श्वास दूसरे की श्वास में जा सके।

रोग रहित माता के शरीर की बिजली और गर्मी बच्चे को बहुत गुणदायक होती है, परन्तु जब बच्चा कुछ बड़ा हो जाय तो उसको अलग खटोले पर सुलाये, जिसमें सुन्दर ताज़ी हवा श्वास लेने को उसे मिले, सुलाने के वास्ते बच्चे को अफ़ीम इत्यादि देना भी बहुत बुरा है।

तीन वर्ष की अवस्था तक बच्चों को दिन में सुलाया जाय, उपरांत दिनके सोने का अभ्यास छुड़ादे, पर रात में नौ घंटे सुलाये, खाने के बाद तुरत बालक को सोने न दे, इस से आहार कम पचता, भेजा तपकता और बुरे २ स्वप्न आते हैं।

बाज़े बालकों को पैर पर पैर धर के सोने और कुर्सी मोढ़े इत्यादि पर बैठ के पैर हिलाने की आदत पड़जाती है, इसकी रोक रखनी चाहिये, क्योंकि एड़ीके ऊपर की पिछली नली जांघों से मिली है, और पैर पर पैर रखनेसे वह दबती, और उस करके बल घटता और पुरुषार्थ मारा जाता है।

इसी प्रकार पांव के हिलाने से यह अवगुण होता है कि जांघों की नसों पर जोर पड़ता और उससे भी पुरुषार्थ घटता है।

बच्चे को खिलाने वाली जो रक्खी जाय, वह न तो कम

आयु वाली हो और न अति बूढ़ीही हो, सुघड़, सुथरी, स्वभाव की हंसमुख और आचरणकी शुद्ध हो, लूली लंगड़ी अंधी कानी, गूंगी बहरी, हकली, क्रोधी, चिड़चिड़ी, दुष्ट, आलसी भुलक्कड़, मैली और कुरूप भी न हो।

❀ नामकरण संस्कार ❀

यह पांचवां संस्कार है जन्म से १० दिन छोड़ ग्यारहवें या १०१ दिन अथवा दूसरी वर्ष के आरम्भ में जिस दिन बालक का जन्म हुआ हो करना चाहिये, और विधि उसकी शास्त्र में यह लिखी है कि उस दिन इष्ट मित्र सम्बन्धी व्यवहारी सब को बुलाय, और विधि पूर्वक यज्ञ करे, बच्चे को स्नान कराय नवीन वस्त्र पहिनाय, पिता गोद में ले, और वेद मंत्रों से आहुति करके पुत्रहो तो नीचे लिखे प्रमाण दो अक्षर का वा ४ अक्षर का घोष संज्ञक और अन्तःस्थ वर्ण अर्थात् पांचों वर्गोंके दो २ अक्षर छोड़के तीसरा, चौथा, पांचवा और य. र, ल, व. यह चार वर्ण नाममें अवश्य आवें * जैसे देव अथवा जैदेव, ब्राह्मण हो तो देव शर्म्मा, क्षत्रिय हो तो देव वर्म्मा, वैश्य हो तो देव गुप्त, और शूद्र

---

* ग, घ, ङ। ज, झ, ञ। ड, ढ, ण। द, ध, न। ब, भ, म। यह स्पर्श और य, र, ल, व, यह चार अन्तःस्थ और ह एक उष्मा इतने अक्षर नाम में होने चाहियें, और स्वरों में से कोई भी स्वर हो जैसे (भद्रः, भद्रसेनः देवदत्तः, भवः, भवनाथः, नागदेवः रुद्रदत्तः, हरिदेवः) पुरुषों का समाक्षर नाम रखना चाहिये। कन्या हो तो एक तीन पांच अक्षर का नाम रक्खें स्पष्ट विधि संस्कार विधि में देखो।

हो तो देव दास इत्यादि सुन्दर और सअर्थ नाम रक्खे आज कल की भांति घसीटा, कढ़ेरा गुबरे इत्यादि भांड़े नाम कभी न धरे क्योंकि 'यथा नामस्तथा गुणः" नाम का भी बड़ाही प्रभाव पड़ता है।

और पुत्रियों का नाम मनुस्मृति में लिखा है कि—

स्त्रीणां सुखोद्यमक्रूरं विस्पष्टार्थं मनोहरम्।
मंगल्यन्दीर्घ वर्णान्तमाशीर्वादाभिधानवत्॥

अर्थात् प्यारा मनोहर और कोमल हो कठोर न हो और अन्त में दीर्घ स्वर आवे, जैसे यशोदा, सुखदा, सौभाग्यवती इत्याद।

भयानक और ऐसे नाम जो—

नर्क्ष वृक्ष नदी नाम्नीं नान्त्य पर्वत नामिकाम।
न पक्ष्यहि प्रेष्य नाम्नीं न च भीषण नामिकाम॥

नक्षत्र, वृक्ष, नदी, म्लेच्छनी, पर्वत, पक्षी, सर्पिणी, दासः और भयंकर पद पर हों, कभी न रक्खे जायें। जैसे रोहिणी रेवती तुलसा, ताड़का, गोमती, गंभीरी, गंगा, चांडाली, कैलासा, कोकिला, हंसा, नागिनी, किंकरी, बांदी, चण्डिका इत्यादि।

निष्क्रमण संस्कार और हवा खिलाना

यह छठा संस्कार है जो जन्म से तीसरे शुक्ल पक्ष की तृतीया को, नहीं तो चौथे महीने अवश्यही करना चाहिये, इस संस्कार से बालक को घर से बाहर भ्रमण कराने का

प्रारम्भ होताहै, और विधि इसकी यह लिखी है, कि संस्कार के दिन प्रातः काल सूर्योदय के पश्चात् बच्चे को शुद्ध जल से स्नान करा, सुन्दर वस्त्र पहिना माता उसकी यज्ञशाला में ले जाके अपने पति की गोद में दे और वह विधि पूर्वक परमेश्वरोपासना, स्वस्तिवाचन, शान्ति करण इत्यादि करके बालक को सूर्य दर्शन करावे और जिस स्थान की वायु शुद्ध हो वहां फिराये।

यही मति वैद्यक शास्त्र की भी है कि जब बच्चा तीन या चार महीने का होजाय, उसको नित्य सबेरे सांझ मैदान में लेजाकर हवा खिलाये, इस से वह अनेक रोगों से बचता, पुष्ट होता, रंग रूप उसका निखरता और अत्यन्त सुख पाता है, और दांत निकलने में पीड़ा कम व्याप्ती और भूख भी उसकी बढ़ती है।

बालक को बाहर लेजाने में आंधी, पानी शीत, लू और पुर्वाई और उत्तराई हवा का बराव रक्खा जाय और कपड़े इस भांति पहिनाये उढ़ाये जावें जिसमें सर्दी वा लू दोनों का बचाव रहे।

जब बालक पैरों चलने लगे तो उसको अभ्यास दिलाया जाय कि हवा खाने पैरों जाया करे, चलने फिरने से पट्ठे मज़बूत होते, लहू शुद्ध होता, शरीरका विकार जाता रहता और बुद्धि भी प्रबल होती है।

❋ टीका ❋

बच्चों को शीतला के दुख से बचाने के निमित्त जब वह दो महीने के होजायँ टीका लगा देना अत्यन्त आवश्यक है

इसके न लगाने से बच्चे बड़ा कष्ट पाते और जान जोखिम रहती है, और लगा देने से किसी प्रकार का भय नहीं रहता और एक बड़ा लाभ यह भी होता है कि बच्चे का रूप बिगड़ने नहीं पाता, देखो कोई मेम या बच्चा उसका शीतला मुँह दाग़ दिखाई नहीं देता और अपने देश की बिरली स्त्री होगी जिसके मुख पर दाग़ न हो, कारण इसका यही है कि वह टीके से डरती नहीं और यहां की स्त्रियां मारे उसवास के बच्चों को छिपाती फिरतीं और अन्त को पछताती हैं।

टीका लगाने के समय या पीछे भी बालक को कोई दुख नहीं होता अच्छी तरह खेलते फिरते हैं, हां एक हलका सा ज्वर आ जाता है, सो उस में कोई औषधि देने का भी काम नहीं, केवल यह करना चाहिये कि दाना जब उठें तो दबने या टूटने न पावें, और जो बच्चे की बांहमें कुछ जलन होती हो तो ऊपरसे दो चार बेर मलाई या मक्खन लगादे या कंकड़ बासी पानी में घिस कर लगा दे।

❋ शीतला ❋

शीतला निकल आवें तो बालक को ठंढे और ऐसे घरमें रक्खे, जहां सूर्य्य की किरण पहुंचती और मंद २ बायु आती हो मकान स्वच्छ और ओढ़ना बिछौना साफ और हलका रहे मैली कोई बस्तु रहने न पावे, दाने नोचने या खुजलाने न दे, बच्चा छोटा हो तो हाथों में थैली चढ़ा दे, दानों में पर से मलाई अथवा मक्खन लगाये, ठंढक पड़ने के निमित्त देह को पानी या उस में सिरका मिलाके धोये, दाग़ न पड़नके वास्ते चूने का पानी और नारियल का तेल मिलाकर लगाये छिल-

के उतरने लगें तब गर्म पानी से नहलाये, तेल नित्य लगावे और आंखें रोज धोये।

❀ दांत ❀

बच्चों को दांत निकलने के समय बड़ी पीड़ा होती, तप आजाता और अनेक रोग खड़े हो जाते हैं, उसकी रोक के निमित्त आहार का बड़ा बिचार रक्खे, विकार करने वाली वस्तु कभी न खिलाये, सूक्ष्म और साधारण आहार दे मल रुकने न पाये और दस्त आतेहों तो कभी उनकी रोक न करे मसूड़े फूल आवें तो नश्तर दिलादे, मक्खन या शहद अंगुली में लगाके मसूड़े दबाये, सहत में नमक मिलाके दिन में तीन चार बेर मसूड़ों पर मले, मुलहठी की सुन्दर छिली और चिकनी चूसनी बच्चों के हाथ में पकड़ा दे और रोज हवा खिलाने भेजे।

❀ झाड़ फूंक ❀

बहुधा स्त्रियां बच्चों की मांदगी में झाड़ फूंक पर बड़ा बिश्वास रखतीं, स्यानों [नौते] की खोज में दौड़तीं, तरह२ की धूनियां जलातीं, गंडे तावीज़ लाके बांधतीं, और कठले बना बना कर पहिनाती हैं। जिनसे गुण के बदले और भी अवगुण होता है, गंडे और कठलों के डोरे और ताबीजों के कपड़े बच्चे के मुख की लार और तेल में जो उनके लगाया जाता है भर कर मैले होते और उन में दुर्गन्ध आने लगती है, जो और भी बिकार करती है कठलों के बोझ से नसें भी दबती हैं जिन से बच्चे पनपने नहीं पाते, इधर उधर का

पानी लाके जो पिलाती हैं उनसे अनेक उपद्रव उठ खड़े होते हैं, और सब से भारी जो हानि होती है वह यह है कि इस झाड़ फूंक और अंडों गंडों के भरोसे स्त्रियां किसी वैद्य या डाक्टर की दवा दारू नहीं करतीं, जिसका परिणाम यह होता है कि अंतको जान के लाले पड़ जाते हैं।

इस लिये यह उन्माद अच्छा नहीं, जब बच्चा मांदा पड़े तुरंत हकीम, वैद्य या डाक्टर को बुलाये, जो दवा वह बतलाये तुरंतही मंगाकर खिलाये और परमेश्वर से प्रार्थना करे कि हे सर्वशक्तिमान्! कृपा करके जल्दी इसको अच्छा करदे।

❀ वस्त्र ❀

बच्चों को नंगा न रक्खे न मलमल तनज़ेब आदि पहिनाये, मोटे, गर्म, साफ़ और ढीले ढाले कपड़े उनको इस भांति पहिनाया करे कि सारा शरीर ढका रहे और गले से कमर तक का अंग तो कभी खुला रहने न पाये, छाती पीठ और आंतों को ठंढ से बहुत बचाये, बाहर भेजने के समय हाथों पैरों में दस्ताने और पैंताबे भी पहिराये, जो न बहुत कसे हों न अति ढीले।

फ़लालीन के कपड़े बहुतही गुण दायक होते हैं, सब न हो सकें तो एक कुर्ता वा शलूका तो अवश्य ही पहिनाये और नीचे उस के कोई दूसरा वस्त्र न रक्खे, छोटे बच्चों के पेट और कमर के चारों ओर रात को फ़लालीन की ढीली पट्टी भी लपेट दिया करे, इस से सर्दी और बहुतेरे रोगों की रोक हो जाती।

जाड़ों में काले, बसन्त ऋतु में नीम रंग और गर्मी वा बर्सात में सफ़ेद और साफ कपड़े पहिराये, रोज बदलने और उजले पहिनाने की सामर्थ्य न हो तो रात के उतारे कपड़े जो धोने वाले हों उनको साबुन अथवा रीठे इत्यादि से धोके सुखला डाले, और जो धोने के योग्य नहीं उनको अच्छी तरह से धूप और हवा दे, जिस में पसीने की नमी और बू जाती रहे।

मैले कपड़े कभी न पहिनाये क्योंकि बच्चों के रोम रंध्रों में से जो पसीना निकलता है वह मैल से रुक के अनेक रोग उत्पन्न करता है। बालक को साफ और सुथरा रखना यही उसका बड़ा शृंगार है, मखमल, गिरंट, साटन, कमखाब या किनारा गोटे के कपड़े पहिनाना और गहने लादना अच्छा नहीं, और यह महाभोंड़ी चालहै कि सोने चांदी से तो बच्चे को लाद दे, और वस्त्र से नंगा या मैला कुचैला रक्खे।

जो रुपया इन चीजों में खर्च किया जाता है, उनकी जगह जो सादे और मोटे कपड़े बनाये जायँ तो दिन में चार जोड़े बदल के पहना सक्ते हैं, जिससे बालक के शरीर की भी रक्षा होसक्ती, सुथराभी रहसक्ता और गहनों की बदौलत जो उसकी जान के लाळे रहा करते हैं, उस बिपत्ति से भी बच सक्ता है।

इसके सिवा गहनों के बोझसे बच्चे के शरीरकी कोमल नसें भी दबती और एक बड़ा दोष यह भी उत्पन्न होता है कि अन्त में बालक घमंड करने लगता, ग़रीब के बच्चों को तुच्छ समझता और काम काज करने से विकृति रहता और जी चुराता है।

❋ अन्न प्राशन ❋

मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक ३४ में लिखा है कि—

षष्ठेऽन्नप्राशनं मासि यद्वेष्टं मंगलंकुले।

अर्थात् छठे महीने या और जो समय कुल रीतिसे निष्ठित हो उस दिन इस संस्कार को करे, इसी प्रकार आश्वलायन गृह्यसूत्र में लिखा है कि—

षष्ठेमास्यन्नप्राशनम् ॥१॥ घृतौदनं तेजस्कामः॥२॥
दधि मधु घृत मिश्रितमन्नं प्राशयेत् ॥३॥

अर्थात् छठे महीने बालक को अन्नप्राशन करावे, जिस को तेजस्वी बालक करना हो वह घृतयुक्त भात अथवा दही सहत और घृत तीनों भातके साथ मिला विधिवत् अन्न-प्राशन करावे और विधी इसकी भी वही सब हैं, जो और संस्कारों की।

जब बच्चे का दूध छुड़ाये और अन्न पर उसको लगाये तब पहले बहुत ही सूक्ष्म और साधारण आहार खिलाये जैसे सागूदाना, आरारोट, निशास्ता, खिचड़ी खीर इत्यादि।

जब बच्चेके दांत निकल आवें तब मोटे और बे छने आटे की फुलकियां दूध अथवा दाल में मलकर खिलाये, महीन आटे की रोटी कभी न दे, वह गद करती और छानने से आटे का सत्त भी निकल जाता है, भात देना चाहे तो चावल पुराने हों और खूब अच्छी प्रकारसे गला कर देवे।

खिलाने के समय बांध रक्खे, बे वक्त कभी न दे और कौर भी बड़े २ न खिलाये, छोटे २ ग्रास दे और खूब चबवाये, निगलने और जल्दी २ बच्चा खाने न पाये, आहार जितना ज्यादा चबलाया जाता है उतना ही जल्दी पचता और गुण करता है। बे रुचि और हाव के से वहुत भी न खिला जाये, इससे अजीर्ण होता और पेट हांडी की नाईं निकल आता है, शरीर दुर्बल हो जाता है निर्बलता बढ़ती और स्वभाव बच्चे का चिड़चिड़ा पड़ जाता है।

पानी खाने के साथ न पिलाये, थोड़ा ठहर के दे और खाना बड़ी सुथराई के साथ खिलाये, बच्चे को गींजने और हाथ मुंह भरने न दे, नाक पोछने को सफेद रूमाल पास रक्खे और मक्खी हिलाती जाय।

बालकों को बासी, बहुत चिकने और मसाले के पदार्थ पक्वान और मिठाई भी अधिक न खिलाये, मीठे से दांतोंको अवगुण पहुंचता, पेट में गड़बड़ रहती, कलेजे में बिकार होता और पित्त बढ़ता है, दूध, मलाई, मक्खन उनको अवश्य खिलाये कि यह सब गुण करते हैं और फलों में अंगूर, अनार, सेव, संतरे, शहतूत, इसटाबेरी, खरबूजे की फांक भी दे, और जो कभी आम्ब कोई चुसाये तो पतले रस का और मीठा हो, रातमें उसको भिगो भी रक्खे जिस में गर्मी उसकी निकल जावे, और ऊपरसे थोड़ा गौ का दूध पिलाये।

ज़र्दक (अमरूत) बेर इत्यादि फल और ऐसे पदार्थ जो पेट में चुभें और जल्दी हज़म न हों खाने न दे, पर हां जब बालक का बल बढ़े और पचाने की सामर्थ्य अच्छी हो जावे तब धीरे २ सब चीजों के खाने का अभ्यास दिलाये जिस

में ऐसा सुकुमार न होने पाये कि कभी कुछ खाये तो तुरंत मांदा पड़ जाय, बच्चों को पान न खाने दे क्योंकि इस से दांत खराब जाते और भूख भी घटती है।

जो स्त्रियां मदिरा पीती हैं वह अपने बच्चों को भी पिलाती हैं और यह बहुत ही बुरा करती हैं, सिवा दवाई के और वह भी जब तक कोई अच्छा हकीम या डाक्टर न बतलावे कभी भी ऐसी बुद्धि नाशक वस्तु को न स्वयं पिये और न बच्चों को पीनेदे।

छोटे बच्चों को खड़ा करना और चलाना।

बहुधा लोग बच्चों की अंगुली पकड़ के उनको खड़ा करते और चलाते हैं, साल भर से छोटे बालक के साथ ऐसा खेल अच्छा नहीं, इस में उसके शरीर का बोझ उसके पैरों पर पड़ता है जिस से पांव के गट्टे निर्बल, जंघा वक्र अर्थात् फिरे हुये पांव टेढ़े होजाते हैं।

❀ डराना ❀

छोटे बच्चों को जब वह रोते या कोई और उपाधि करते हैं, स्त्रियां हूँ हा हव्वा इत्यादि भयानक शब्द और नाम, और कभी डरावनी सूरत बना २ के डरातीं और सयाने बालकोंको भूत प्रेतकी कहानियां भी सुनाती हैं जो बहुतही अनुचित है। क्योंकि बालक के हृदय कोमल होते हैं, भय व्यापने

से बुद्धि हीन हो जाने और जान तक जाने का डर रहता है और जो इस आपदा से बचे वह डरपोक तो अवश्यही हो जाते हैं, अपनी परछांई से भी भागते और सारी उमर कायर बने रहते हैं, इस लिये उनको केवल आंख का भय दिलाना चाहिये, और किसी प्रकार से डराना अच्छा नहीं।

जो कदाचित बच्चा कभी भय खाजाये, तो दीपक सारी रात जले और चौकसी रहे, कि जब वह चौंक उठे जागता पाये, ऐसी अवस्था में बालक को कभी घुरकी न दे बड़े प्यार से उसको बहलाये और फुसलाये, जिस में भय उस के जी से निकल जाय।

❀ खिलौना ❀

खिलौने जो बालकों को दिये जावें वह विशेष कर ऐसे हों जो दबाने से बोलें, या फूकने से बजें, वा जिन को लेकर वह दौड़ें और कूदें फांदे, ऐसे खेलों से उन का बल बढ़ता और शरीर पुष्ट होता है।

इस का बड़ा ध्यान रहे कि बच्चे जो खेल खेलें वह गुण दायक और बुद्धि की वृद्धि करने वाले हों, ऐसे न हों जिन से उनकी आरोग्यता बिगड़े और बुद्धि भ्रष्ट हो।

लड़कियों को और खिलौनों के सिवा बड़ीछोटी भांतिर की गुड़ियां देना और खेल की रीति बताना चाहिये, जिसमें वह खेल ही खेल में सारे धंधे जो उनको स्यानी होने पर करने पड़ेंगे सीख जावें।

❋ स्वभाव और आचरण ❋

बच्चों का स्वभाव और उनके आचरण बनाना या बिगाड़ना दोनों स्त्री के आधीन हैं, जो सिरे से बुराइयों को नहीं रोकती और अच्छे ढब नहीं डालती है, उस के बालक महा दुष्ट और दुखदायी निकलते हैं। और जो भले बुरे का विचार रखती और उत्तम ढंग पर लगाती हैं, आप भी सुख उठातीं और बच्चों को अति सुशील और सुघड़ बनाती हैं।

माता का धर्म है कि जन्म ही से बच्चे के स्वभाव और चलन सुधारने का यत्न करे और इस भूल में न रहे कि स्याना होने पर आप सुधर जायगा, बच्चे कोरे घड़े के सदृश होते हैं जिस में जो वस्तु प्रथम डाली जाती सदा उसी का प्रभाव बना रहता है और प्रकृति भी उनकी दर्पण की नाईं होती है कि उस पर जैसी छाईं पड़ती वैसी ही आकृति दिखाई देती है, वह जो देखते और सुनते वही करने लगते हैं, इस वास्ते उनकी दृष्टि के सामने कोई खोटे कर्म होने या कानों में फूहड़ शब्द कभी न पड़ने दे।

स्त्री अपने चलन भी निर्दोष और स्वभाव हंसमुख रक्खे, चिल्लाना, झुंझलाना, नाक भौं चढ़ाना सब छोड़दे, किसी से तू तकार तक न करे, और उत्तम गुण और सुन्दर आचरण की आदर्श बने, नहीं तो जो अवगुण बच्चा देखेगा वही ग्रहण करेगा और जो आदत उस की पड़ेगी जीवन काल तक बनी रहेगी।

इस हेतुसे कि बच्चे का स्वभाव मधुर बने और वह नम्रता और मिलन सारी सीखे, सदा उसके साथ हंस के और बड़े

प्यार से धीमा और मीठा बोले, कभी कड़वी और खेल में भी कोई झूंठी बात न कहे और जबान टूटते ही अभ्यास दिलावे. कि प्यारी तोतली बोली में जो बात उस के मुँह से निकले मीठी प्यारी और सच्ची हो, फूहड़ कठोर और झूठ बोलने से झिझके, गाली देने, मारने और मुँह चिढ़ाने से डरे, बिना दिये किसी चीज़ पर कभी आंख न उठाये, खाने पीने की वस्तु दूसरे वच्चों के साथ बांट चूंट के खाये और मिल जुल के खेले।

जितने बालक हों सब को समदृष्टि से देखे और बराबर का स्नेह करे, जिस में उन के परस्पर बैर विरोध उत्पन्न न हो बच्चों के स्वभाव में डाह बहुत होती है, एक का पक्ष करने में दूसरा तुरन्त बुरा मान जाता और ईर्षा करने लगता है।

इस की बड़ी चौकसी रक्खे कि बच्चों को कोई चिढ़ाने और उन के स्वभाव में क्रोध या क्रूरता आने न पावे, चिढ़ाने से बालक चिड़चिड़ा हो जाता, क्रोध करने से पनपने नहीं पाता और क्रूर हो जाने से निर्दई बना रहता है, जब कभी बालक को क्रोधित देखो, उस को शांत करने के लिये कुछ खेल की बस्तु देकर ध्यान उस का बंटा दे, यह न करे कि उस समय आप भी चिल्लाने लगे।

बालक को बहुत दुतकारना, फिटकारना भी अच्छा नहीं बात २ में झिड़कने और झुंझलाने से स्वभाव उसका बिगड़ता ढीठ और निर्लज्ज होजाता, बात नहीं मानता, और झिड़की सुनते २ स्याना होने पर कादर भी बन जाता है। इस लिये कोई चूक उससे होजाय तो सावधानी से समझाये,

जो कुछ कहना हो प्यार से कहे और काम जो लेना हो दिलासे से ले।

जहां तक होसके बच्चों का लाड़ और प्यार करे, उनके परिहास के निमित्त नये २ खेल निकाले, उनके ज़रा २ सी चीज़का भी ध्यान रक्खे, उनकी याचना और उलाहनोंको सुने और हर काम और खेल में उनका यहांतक साथ दे कि आप भी बालक बन जाय, पर हां उनको शिर पर भी न चढ़ाये, कि वह ढीठ और हट्टी बनजायें और कहा न माने।

बालक का आज्ञाभंजक होना बहुतही बुरा और सब बुराइयों की जड़ है, यह दोष छोटी २ बातों पर ध्यान न देने और भोंड़ा दुलार करने से आजाता है, और अंत को हठ बच्चे की इतनी बढ़ जाती है कि कोई वश नहीं चलता। इस वास्ते माता को चाहिये कि दुलार प्यार सब कुछ करे पर साथ ही में दबाव भी अपना बनाये रक्खे और ऐसे ढंग पर लगावे कि बच्चा आंखों की सैन समझे, भय माने और जो कहा जाये, वही करे।

यह ढब बहुत ही सुगमता से यों पड़सक्ता है कि ज्योंही बच्चा बैठने और घुटनों रेंगने लगे उसी समयसे जब किसी चीज़पर लपके उसको रोक दे, जहां एक बेर अंगुली हिलाई या ना कही जावेगी, वह तुरंत ही रुक जायगा।

इसी तरह से जब वह कुछ बोलने और पैरों चलने लगे, जब किसी वस्तुको उठाये, या लेना चाहे और धीरे से मना करने पर न माने, तो डांट के कहे, आंखें चढ़ी देख और डपट सुनके वह अवश्यही डर जायगा और छोड़ देगा, फिर

उसको कोई खिलौना देदे और कहे खबरदार वह वस्तु कभी न छूना, यह खिलौना लो और खेलो, इस ढंग से उसको कोप और प्रीति दोनों दृष्टिका ज्ञान आने लगेगा और बराबर कहा मानेगा।

दो बातों का बड़ा ध्यान रहे, एक तो जिस चीज़ पर बच्चा मचले वह कभी न पावे, दूसरे जो बात उसको मना करे, वह ऐसी दृष्टि और दृढ़ताके साथ कहे कि अवज्ञा करने का उसे हियाव न पड़े।

बालक को कभी ताड़ना देने की ज़रूरत पड़े तो यह न करे कि हलके हाथों से दो धौल लगादे और दांत पीस या बक झक के चुप हो रहे, इससे उसको कभी भय न होगा और भी ढीठ होजायगा, जी कड़ा करके उसको एकांत में पकड़ लेजाय और इस जोर से तमाचे मारे या कान मले कि वह कष्ट उसको कुछ दिनों याद रहे, फिर उसको वहीं अकेला छोड़कर चली आवे, और जब वह शांत होले, थोड़ी देर पीछे जाकर कहे कि तूने देखा कि हठ और अवज्ञा करने का कैसा बुरा फल मिलता है ! और जो दुख तूने उठाया इससे निश्चय होता है कि अब ऐसा अपराध तू कभी न करेगा, इस कहने पर वह अवश्यही प्रतिज्ञा करेगा कि फिर ऐसा अपराध कभी न करूंगा।

तब उसको गोद में उठाकर प्यार करे और कहे कि अच्छा मैंने तेरा दोष क्षमा किया परन्तु आगे को फिर कभी ऐसा न करना। इस भांति ताड़ना देने और क्षमा मंगाने से बड़े २ गुण निकलेंगे।

रातको भी माता जब बालक को लेकर लेटे प्यार के साथ उसको समझाये कि बड़ों का कहा न मानना बहुत ही बड़ा दोष है, परमात्मा कोप करता, माता पिता दुखी होते और अपने पराये सब बुरा कहते हैं, कोई पास खड़ा होने नहीं देता, और उदाहरण सुना२ के उसके हृदयमें जमा दे कि मां बापका बचन टालना और हठ करना बहुतही बुरा है,इस प्रकार ताड़ना करने और समझाने से बालक सदा कहे में रहता और भय मानता है।

जो स्त्रियां बुद्धिमान होती हैं उनको मार पीट करने का अवसर बहुतही कम पड़ता है वह खेल ही खेल में बच्चों को वश कर रखतीं और ऐसा आज्ञाकारी बना देती हैं, कि बेकहे वह पानी तक नहीं पीते. जितने बालक होते हैं सब को वह अपने सामने बिठलाती और अलग२ खेल बतला कर कहती हैं कि सब अपना २ खेल खेलो, धूम और दंगा न करो, बालक खेल में लगते, आप अपना धंधा करती और बीच२ में उन को देखती और मन उन का बढ़ाती जाती हैं।

जब घड़ी दो घड़ी वह खेल चुकते उन से कहती हैं कि बस अब बंद करो, इस कहने पर जो बच्चे प्रार्थना करते हैं कि खेल पूरा होने में थोड़ी कसर रह गई है, आज्ञा दे तो पूरा करलें,वह हुकुम देती हैं कि अच्छा जल्दी से पूरा करके मुझ से कहना, बच्चे प्रसन्न होजाते और जब खेल समाप्त होता मां को दिखाते हैं, वह प्रशंसा करती है कि वाह ! बहुत ही सुन्दर बनाया है. इस को अच्छी तरह संभाल के रख दो जिस में बिगड़े नहीं, वह संभाल के रख देते और तुरंत माता के पास आन बैठतेहैं, और जो वह बताती बड़े हर्ष सेकरते हैं।

ऐसी युक्ति से बर्तने में बच्चे प्रसन्न भी रहते और कहा भी मानते हैं, और मां की भी वह दुर्गति नहीं होती कि वह भौंक रही है, और बच्चा सुनताही नहीं, जिस बात को मना करती वही अदबदा के करता है, कहीं कुछ तोड़ता कहीं कुछ फोड़ता, मां पकड़ने जाती आप गली में हो रहता, यह दांत पीसती, वह मुँह चिढ़ाता, यह कोसती काटती, वह गालियां बकता है।

यह गति उन्हीं फूहड़ स्त्रियों की उनके कपूत किया करतेहैं जिन्होंने अपने बच्चोंको अनुचित लाड़ प्यार करके बिगाड़ा है।

इस लिये अपने बच्चों का अनुचित लाड़ प्यार छोड़ कर सदैव उनकी शिक्षा में यत्न करती रहें।

❋ चूड़ा कर्म्म (मुंडन) संस्कार ❋

यह आठवां संस्कार चूड़ा कर्म है जिस को केश छेदन संस्कर अथवा मुंडन भी कहते हैं। मनुस्मृति अ० २ श्लो० ३५ में लिखा है कि—

चूडाकर्म्म द्विजातीनां सर्वेषामेव धर्म्मतः।
प्रथमेऽब्दे तृतीये वा कर्तव्यं श्रुति चोदनात् ॥

अर्थ—द्विजातीनां अर्थात ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य को चूड़ा कर्म धर्मानुसार प्रथम वा तीसरे वर्ष वेद की आज्ञा से करना चाहिये।

परन्तु आज कल के द्विजों की दशा अकथनीय है, जिस शिखा (चुटिया) के बदले हमारे पूर्व पुरुषाओं ने प्राण तक

देना स्वीकार किया, शोक है कि आज उन्हीं की संतान वेद शास्त्रों की आज्ञाओं का उल्लंघन करके गंगा, यमुना, कबरों मदारों इत्यादि पर चुटिया कटाते फिरते हैं, लेकिन इसमें क्या कुछ पुरुषों का दोष है? कदापि नहीं, यह सारे कर्म आप के ही हैं जोकि मुंडन के समय हठ करती हो कि नहीं नहीं, हमतो अपने ललुआ का मुड़ना मदारों में ही करावेंगी, हम ने तो वहीं का बोला है, इसी दशा को देखकर किसी कवि ने यह कवित्त रचा है।

❀ कवित्त ❀

कोई पीरन जात फकीरन मानत, कोई कबरनपर वस्त्र चढ़ावहीं। कोई रिन्दई जिन्दई पूजती हैं, कलवा के ढिंग बकरा को चढ़ावहीं॥ जौन शिखा रह धर्म निमित्त सो तौन मदारन माहिं मुड़ावहीं। भारत भागिनी ठगिनी भई निज सीस पै आप ही पाप चढ़ावहीं॥

इस लिये इस कवित्त को पढ़ कर लजाओ! और अपने पुरुषाओं की मर्यादा न गंवाकर शास्त्र आज्ञानुसार समस्त संस्कारों को किया करो।

❀ कर्णवेध संस्कार ❀

यह संस्कार भी अन्य संस्कारों की भांति ही किया जाता है। बालक के कर्ण वा नासिका के वेध का समय जन्म

से तीसरे वा पांचवें वर्ष का है, जो दिन कर्ण वा नासिका के वेध का नियत किया हो उस दिन बालक को प्रातः काल शुद्धजलसे स्नान करा और नवीन सुन्दर वस्त्र पहिना बालक की माता यज्ञशाला में लावे, और विधिवत् किसी योग्य वैद्य से जो कि चरक, सुश्रुत आदि वैद्यक ग्रन्थों का जानने वाला हो, उससे इस संस्कार को करावे।

किन्हीं २ महाशयों का यह विचार है कि यह संस्कार ही व्यर्थ है परन्तु उनका यह विचार ठीक नहीं है क्योंकि इस संस्कार का वैद्यक से सम्बन्ध है जिसे योग्य वैद्य ही भली प्रकार समझ सक्ते हैं, यदि यह व्यर्थ ही होता तो ऋषि दयानन्द अपनी संस्कार विधि में इसे स्थान कदापि न देते, और यह कभी न लिखते कि इस संस्कार को चरक, सुश्रुत वैद्यक ग्रन्थों के जानने वाले सद्वैद्यों के हाथ से करावे। और जो यह वैद्यक से सम्बन्ध न रखता होता तो वर्तमान प्रथा का जो कि मूर्ख सुनारों द्वारा कराया जाता है, खंडन कदापि न करते।

❀ शिक्षा ❀

बालकों को छुटपने से सिखाना चाहिये कि नित्य सवेरे सांझ माता पिता और घर के सब बड़ों को प्रणाम, नमस्ते आदि और छोटों को प्यार किया करें, सबकी प्रतिष्ठा मानें, प्रिय बचन बोलें कोई घरमें आवे या आप किसीके घर जावें तो धूम न मचायें, सावधान होके बैठें, किसी की चीज न छुयें, न किसी से कुछ मागें, बकवाद भी न करें, न दूसरों

की बात में तर्क दें, जब दो मनुष्य बातें करते हों, आप चुप बैठे रहें, कोई कुछ पूँछे तो सावधानी और मधुरता के साथ उत्तर दें, गूंगे बहिरे न बन जायें, दूसरों के बालक जब अपने घर आवें अथवा आप जब उनके घर जायें, उनसे स्नेह और प्रीति से मिलें, मीठा बोलें, लड़ाई झगड़ा मार पीट कुछ न करें, मिल के अच्छे २ खेल खेलें।

जब बच्चे लिखने पढ़ने के योग्य हों उन को छोटे २ श्लोक, दोहे, भजन, स्तुति इत्यादि सिखलावें और सीधे स्वरों में गवावें।

गाने का बच्चोंको बड़ा चाव होताहै और बड़ी प्रसन्नता से सीखते हैं, इस के सिखलाने में यह भी गुण होता है कि बच्चों की छाती चौड़ी होती फेफड़े और शरीर को बल पहुंचता, बहुत से रोग नाश होते, कान में रस आता, आवाज सुरीली होती, उच्चारण सुधरता, मन और चाव सुन्दर बनता उद्योग बढ़ता और ईश्वर के भजनमें भी प्रीति उत्पन्न होती है।

इस के सिवा स्त्री को चाहिये कि आप पोथी लेकर बैठे और बच्चों को छोटी २ शिक्षायुक्त कहानियां पढ़कर सुनाये गिनती सिखाये, पहाड़े याद कराये, फल फूल, कौड़ी पैसा, या दाने लेकर जोड़ना बतलाये, रंग२ के फूल,फल, पत्ते और पेड़ों के गुण और नाम तथा भांति २ के जानवरों के काम बताये, प्रत्येक वस्तु के गुण समझाये सुन्दर उदाहरण और चित्रों के द्वारा तरह २ की शिक्षा दे, और ननिहाल, ददिहाल की पीढ़ियों के नाम, गोत्र, प्रवर इत्यादि और कुल के इतिहास जो हों बतलाये।

❀ उपनयन संस्कार ❀

यह दशवां संस्कार है और इस के विषय में मनुस्मृति में लिखा है कि यह संस्कार गर्भ से अष्टम वर्ष में ब्राह्मण का और गर्भ से एकादश में क्षत्रिय का और द्वादश में वैश्य का किया जावे, जैसा कि मनु अ० २ श्लो० ३६ में लिखा है-

गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम्।
गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भात्तु द्वादशे विशः॥

परन्तु जिनको शीघ्र विद्या बल और व्यवहार करने की इच्छा हो और बालक भी पढ़ने में समर्थ हुये हों, तो—

ब्रह्मवर्चस कामस्य कार्यं विप्रस्य पञ्चमे।
राज्ञो बलार्थिनः षष्ठे वैश्यस्येहार्थिनोऽष्टमे॥

ब्राह्मण के लड़के का जन्म वा गर्भ से पांचवें, क्षत्रिय के बालक का जन्म वा गर्भ से छठे और वैश्य के लड़के का जन्म वा गर्भ से आठवें वर्ष में यज्ञोपवीत करें।

परन्तु यह बात तब सम्भव है कि जब बालक की माता और पिता का बिबाहपूर्ण ब्रह्मचर्यके पश्चात् हुआ होवे उन्हीं के ऐसे उत्तमबालक श्रेष्ठवुद्धि और शीघ्रसमर्थ और पढ़नेवाले होते हैं। जब बालक का शरीर और बुद्धि ऐसी हो कि अब यह पढ़ने के योग्य हो गया है तभी यज्ञोपवीत कर देवें, इसी संस्कार के साथ ही वेदारम्भ संस्कार कराके बच्चों को गुरुकुल पठनार्थभेजा करतेहैं। परन्तु आजकल इन संस्कारों की

ऐसी मिट्टी पलीद की है कि बिलकुल ही गुड़ियों का खेल बना दिया है, प्रथम तो बहुत सी जातियों ने इन संस्कारोंको करनाही बन्द कर दियाहै और जिन में होते भी हैं उन में वही गुड़ियों का सा खेल किया जाताहै कि बेटा लौट आओ गुरुकुल जाकर क्या करोगे तुमको यहीं पढ़ावेंगी और तुम्हारा नन्हीं सी बहू के संग विवाह करदेंगी, और फिर अपनी मातृ भाषा तथा संस्कृत को छोड़कर बच्चों की बिस्मिल्ला कराई जाती है। शोक है उन की बुद्धि पर जो अपने सत्यशास्त्रों की आज्ञाओं का उल्लघंन करके ऐसे २ कृत्य करते हैं।

यह चाल मुसल्मानी राज के समय से इस देश में पड़ गई है कि जो लोग फ़ार्सी पढ़े हैं जब पहले पहल बच्चों को पढ़ने बैठाते हैं तो वेदारम्भ संस्कार को छोड़ कर उस दिन जो कृत्य किया जाता है उसको बिस्मिल्ला या मकतब कहते हैं।

उसमें हिन्दूपन दिखाने के निमित्त नाम मात्र को नवग्रह की पूजन और पण्डित को चार पैसे दक्षिणा देके, मौलवी साहिब की यथाशक्ति प्रतिष्ठा करते और लड़के को फ़ार्सी पढ़ाना आरम्भ कराते हैं।

देववाणी और वेदोंका पढ़ाना तो कठिन है, अपनी भाषा तक नहीं सिखाते, जिस करके उस को न अपने धर्म में ज्ञान होता, न पुरानी मर्यादों को समझता है, शास्त्र और उत्तम विद्याओं का लोप होता जाता है।

सबसे पहले बालक को अपनी भाषा पढ़ानी चाहिये जब उसमें बोध होजाय तब संस्कृत और अंग्रेजी जहां तक होसके पढ़वाये और यदि शक्ति हो तो गुरुकुल में अवश्यही भेजे।

विद्यारम्भ होने पर छोटे बच्चों को स्कूल भेजने का काम नहीं, स्त्री उनको अपने आप पढ़ाये, माता की मीठी और प्रेम भरी बोली बच्चे के मन पर बड़ा असर करती और वह खेल ही खेल में बहुत कुछ सिखा सक्ती है।

बच्चों के पढ़ाने की सुगम रीति यह है कि प्रथम उस को ताश और तसवीरों के द्वारा अक्षरों का बोध कराये, फिर मात्रा लगाना सिखाये, क्रम से दो२ तीन२ चार२ अक्षरों के शब्द और पशु पक्षी इत्यादि के नाम बतलाये, तत्पश्चात् छोटी कहानियां और उपदेश की पुस्तकें पढ़ाये, पर बहुत श्रम न ले, पुस्तक से थोड़ा और ज़बानी ज्यादः बताये और चित्र खींचना और सुन्दर अक्षर लिखना भी सिखाये।

सात वर्षकी अवस्था तक दिल और दिमाग पर बहुत जोर न डाले, आरोग्यता, बल और बुद्धि के बढ़ाने और उत्तम आचरण बनाने का विशेष ध्यान रक्खे, बुरे ढब कोई न डाले, दुष्ट और नीच संगत से बहुत बचाये, बोल चाल, और छोटे बड़ों का आदर सत्कार करने की रीति अच्छी तरह से सिखाये, और बतलाये कि जब दुसरों के घर जाय किस प्रकार उठे बैठे, जब अपने घर कोई आये क्योंकर बैठ-लाये और क्या आदर करे, दया और धर्मकी रीति बताये परमेश्वर की भक्ति सिखाये और समझाये कि यह सारी सृष्टि जो देख पड़ती उसी की रची है, वही पालता, वही जिलाता और वही रक्षा भी करता है जब बच्चा किसी जीव को सताय या कोई और दोष करे, उसको भय दिलाये कि ऐसे बुरे कामों से परमात्मा कोप करता है, और उससे नित्य सवेरे सांझ ईश्वर की स्तुति प्रार्थना भी कराये।

इस भांति सिखाने और पढ़ाने से बालक सुशील भी बनता और गुरुकुल या स्कूल जाने की अवस्था तक मातृ भाषा अच्छी तरह सीख जाता है और फिर उस को दूसरी भाषा और प्रत्येक विद्याओं के पढ़ने और सीखने में बड़ी सुगमता होती है। जब लड़का स्याना होजाय तब स्त्री आप न पढ़ाये पुरुषों को सौंप दे, परन्तु जो वह पढ़ कर आवे सुने और लिखना उसका देखा करे और ताकीद करती रहे। बाल शिक्षा में कभी आलस्य न करे और इस नीति को याद रक्खे कि—

माता शत्रु पिता बैरी, येन बालो न पाठितः॥

अर्थात् वह मां पूरी शत्रु है और वह पिता पूरा बैरी है जो बालकों को पढ़ाता नहीं है।

लड़कियों को स्त्रियां आपही पढ़ायें लिखायें, और उन को गृहस्थीके सारे धंधे, भांति २ की रसोई, मिठाई, पक्वान अचार और मुरब्बे बनाना, प्रत्येक सुई के काम और चित्रों का खींचना, गाना, बजाना, सब अच्छी प्रकार सिखलायें, रोगी की टहल भी जिस भांति करनी चाहिये, बतलायें और जब अवसर पड़े उन्हीं से लें, ऐसी सेवा में अभ्यास करने से विचार बढ़ता, स्वभाव नम्र होता, और अपने आप पर विश्वास करना और मन मारना आता है, हलके हाथों से काम करने और धीरे बोलने की आदत पड़ती और निर्दई भी नहीं होती हैं।

क्रोध, कलह, उपाधि, उन्माद, ईर्षा, द्वेष, छल, कपट, झूठ, लुतरापन इत्यादि कोई दोष उनमें आने न दें। अच्छे

आचार सिखायें, कोमल स्वभाव बनायें, लज्जा और शील रग रग में पहिनायें और ज्ञान तथा धर्म की नीति बतलायें।

आठ या नौ वर्ष की अवस्था होने पर लड़कों के साथ खेलने न दें और खेल भी उनको ऐसे गुणदायक खिलायें जो स्याने और घर बार वाली होने पर उनके काम आयें और वही सब धंधे हो जायें। स्यानी लड़कियों को अकेली न छोड़े और न दो का एक बिस्तरे पर साथ सोने दें, और उनकी चाल ढाल बोल चाल पहनावे उढ़ावे पर बड़ा ध्यान रक्खें।

कोई लड़की एक क्षण भी बिना काम न रहने पाये और ऐसी आदत डाली जाय कि किसी प्रकार की टहल करने में अपनी हीनता न समझे, और न जी चुराये, घरके सारे धंधे चाव और उमंग से किया करे, और अपनी तो कुल टहल आप ही करले किसी का सहारा न ढूँढ़े, अपने वस्त्र और चीज अपनी आप धरे उठाये, कपड़े अपने आपही रंगे बिछौना अपना आप बिछाये और उठाये।

बदचलन (बुरे आचार वाली) स्त्रियां लड़कियों के पास कभी बैठने न पावें, न उन के सामने बेजा हंसी और निर्लज्जता की बात कोई कहे, और न बुरी किताबें या राग या रस की पोथियां वह पढ़ने या सुनने पायें।

लड़कियों के मुँह पर उनके विवाह की चर्चा कभी कोई भूल से भी न करे, इस से बहुत बड़ा अवगुण यह होता है कि रजोधर्म को वह अपनी अवस्थासे पहले प्राप्त हो जाती हैं।

❋ कसरत करना ❋

लिखने पढ़ने के सिवा अभ्यास कराया जाय कि कम से कम दो तीन मील रोज लड़के टहला करें, नित्य बीस डंड और सौ हाथ मुग्दर फेरें, बैठकें लगायें और दौड़ने में अभ्यास बढ़ावें, तैरना सीखें, इन सब कामों से शरीर आरोग्य रहता देह में बल बढ़ता और फुरती आती है।

घर में कोई पेशा होता हो तो वह अवश्य और दूसरे हुनर या कुलादिकों के काम भी सिखलाये जांय। दस्तकारी जानने से जीविका कभी दुर्लभ नहीं होती और न पराधीन होना पड़ता है। चीन, जापान, ईरान, अरब, अफ़गानिस्तान इत्यादि देशों में रीति है कि जब तक मनुष्य किसी प्रकार की शिल्प विद्या सीख नहीं लेता उसका बिवाह नहीं होता है, और अंगरेजी में तो कोई पुरुष या स्त्री ऐसी न होगी जो कुछ न कुछ गुण रखती न हो, यह उसी उत्तम चाल का फल है कि एक से एक कुबेर बना फिरता और यहां जिस की केवल चाकरी की बृत्ति है, कल्ह नौकरी छूटी आज भूखों मरता है।

❋ हकलापन दूर करने का उपाय ❋

जो बालक हकलाता है, बहुधा निर्बल जल्दबाज और उतावला होता है, उसके मन में बिचार इतने बेग से उठते हैं कि जल्दी बोलने में उलझन पड़ जाती है और जब मांदा या थका होता है तो और भी ज्यादा हकलाने लगता और क्रोध या उद्वेग का अवस्था में तो मुह से साबित बात भी नहीं

निकलती है, पर जब सावधान होता अथवा जिन से स्नेह रखता है, उन के साथ अकेले में साफ़ बोलता और कम हकलाता है॥

यह दोष दो कारणों से हो जाता है, एक तो भेजा तालू इत्यादि में विकार, या जीभ छोटी होने के कारण, और वह असाध्य है, दूसरे रगों के पूरा काम न देने से यह उपाय करने से जाता रहता है, इस लिये पहिले तो डाक्टर को दिखाये कि तालू या जीभ दूषित तो नहीं है, और जो उनमें कोई दोष न पाया जाय तो यह उपाय करे।

(१) ध्यान रक्खे कि जब बालक हकलाये कोई हंसने और चिढ़ाने न पाये।

(२) शांत और सहनशीलता के साथ उसकी बात सुने और बड़े प्यार से समझाये कि सावधान होके और बिचार के बोले।

(३) जल्दी बोलने की आदत छुड़ाये और अभ्यास दिलाये कि धीरे२ और तौल२ के मुहँसे बात निकाले, जल्दी न करे सांस ले ले कर बोले।

(४) एकांत में उसको लेजाकर बातें करे जिस शब्द पर हकलाये उस को दुहरा तेहराके कहलवाये और जल्दी२ बोलने न दे।

(५) समझा के बतला दे कि जहां बोलते२ उलझन आवे अपने दहने हाथ की अंगुली तोड़ने लगे।

(६) पत्थर या कंकड़ का एक छोटा और साफ़ टुकड़ा उसको देकर कहे कि मुहँ में रख के एकांत में जाकर टहले

और अपने मन से धीरे २ बातें करे और इस प्रकार नित्य अभ्यास बढ़ाये ।

(७) झुक के या टेढ़ा मेढ़ा बैठकर किसी से बातें न करे, बोलने के समय सीधा और तन के बैठा करे, या खड़ा होकर बोले ।

(८) ताकीद करके हर रोज थोड़ी देर मुग्दर या लेज़म उस से हिलवाया करे, इस से उसका सीना चौड़ा होगा और इस दोष के सिवा खांस या आवाज़ बैठी होगी तो वह भी अच्छी होजायगी और नसों की कमज़ोरी से और जो रोग होंगे वह भी सब जाते रहेंगे ।

(९) छोटे २ भजन और गीत भी गवायें और गान विद्या खूब सिखलाये, इस में ताल सुर और बोल इत्यादि पर बड़ा ध्यान रखना पड़ता और उसके कारण से यह दोष पूरा मिट जाता है ।

❋ बिवाह संस्कार ❋

मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक २ में लिखा है कि—

वेदानधीत्य वेदौ वा वेदं वापि यथाक्रमम् ।
अविप्लुत ब्रह्मचर्य्यो गृहस्थाश्रम माविशेत् ॥

अर्थात् पूरे ब्रह्मचर्य्य के साथ पहले तीनों वेद, अथवा दो, या एक ही यथावत पढ़े और विद्या संचयकरे, तत्पश्चात् गृहस्थाश्रम करे । और इस पर भविष्य पुराण में इतना और

बढ़ाया है कि जब पुरुष कुछ धन संपादन भी करले तब गृहस्थ बने।

इस लिये माता पिता को उचित है कि बालकों का बिवाह संस्कार करने में उतावली न करें, शास्त्र की मर्यादानुसार प्रथम उन को अच्छी तरह से पढ़ावें। और जब वह अनेक विद्या और गुणों में सम्पन्न और बुद्धि और बलके प्रबल हो जायँ और लड़का कुछ कमाने भी लगे या कमाने के योग्य होले तब उस के बिवाह का प्रयत्न करें।

इस पर जो कोई यह तर्क करे कि इस आशा में तो बिबाह का समय ही व्यतीत हो जायगा लड़कियों को बैठा रखने में मां बाप को पातक भी होगा और नरक भोगना पड़ेगा, क्योंकि कहा है—

अष्टवर्षा भवेद् गौरी नववर्षा च रोहिणी।
दशवर्षा भवेत्कन्या तत ऊर्ध्वं रजस्वला॥
माता चैव पिता तस्या ज्येष्ठो भ्राता तथैव च।
त्रयस्ते नरकं यान्ति दृष्ट्वा कन्यां रजस्वलाम्॥

अर्थ-आठ वर्षकी अवस्था तक लड़की गौरी कही जाती नवें वर्ष रोहिणी, दशवें में कन्या और उसके उपरांत रजस्वला कहलाती है, जिसको बिना ब्याही देखने से माता पिता बड़ा भाई, तीनों नरक में जाते हैं।

यह निरा भ्रम है और बचन भी प्रामाणिक नहीं, इनका खंडन भी पहले तो उन्हीं कृत्य से होताहै जो बिबाह संस्कार

में किये जाते और इतने छोटे बच्चों से हो नहीं सक्ते हैं, दूसरे वर और कन्या दोनों का पढ़ा लिखा होना इस से भी विदित है कि उनको बहुत से वेद मंत्र पढ़ने पड़तेहैं, जो ऐसे बालक उच्चारण भी नहीं कर सक्ते हैं, तीसरे परस्पर प्रतिज्ञा जो उस समय दोनों करते हैं, वह न आठ वर्ष की लड़की समझ सक्ती है और न नौ वर्ष का लड़का, उन को तो यह भी ज्ञान नहीं होता कि यह हो क्या रहा है, और हम कर क्या रहे हैं, अपनी जान में उसको भी एक खेल समझते हैं और ऐसे बिवाह को गुड़ियों का बिवाह तो मैं भी कहूंगा, अंतर केवल इतना है कि उस में बच्चे अपने मन का चाव निकालते हैं और इसमें बूढ़े।

छोटी अवस्था में बिवाह की आज्ञा श्रुति, स्मृति, किसी में नहीं है, और व्यास, दत्त, शातातप, वृद्ध गौतम, आश्वलायन, बौधायन इत्यादि सबका यही मतहै कि प्रथम लड़के शास्त्रोंको पढ़ें और अनेक विद्या प्राप्त करलें तब बिवाह करें।

और लड़कियों के वास्ते भी यही लिखा है कि बिवाह से पहिले अच्छी प्रकार पढ़ाई जावें, जिसमें अपना धर्म और कर्म समझ सकें। जैसा कि हेमाद्रि धर्म शास्त्र का श्लोक है कि—

कुमारीं शिक्षयेद्विद्यां धर्म नीतौ निवेशयेत्।
द्वयोः कल्याणदा प्रोक्ता या विद्यामधिगच्छति॥
ततो वराय विदुषे कन्या देया मनीषिभिः।
एषः सनातनः पंथा ऋषिभिः परिगीयते॥

अर्थ-कुमारी कन्या को प्रथम विद्या पढ़ावें और धर्म नीति सिखावें क्योंकि जो विद्वान् होतीहै दोनों कुलको सुख देती है, विद्या पढ़ाने और धर्म शिक्षा देनेके पश्चात् विद्वान वर के साथ उस का बिवाह करे, यही सनातन धर्म ऋषि लोगों ने कहा है—

अज्ञात पतिमर्य्यादामज्ञात पतिसेवनां।
नोद्वाहयेत् पिता बालामज्ञातधर्म शासनां॥

अर्थात् जब तक कन्या पति की मर्य्यादा और पति सेवा की रीति जान न ले और धर्म शासन से अज्ञात रहे तब तक पिता उसका बिवाह न करे। वेदों की भी श्रुति हैं देखो ऋग्वेद मं ३ सू० ५५ मं १६ में लिखा है कि—

आधेनवोधुनयन्ता मशिश्वीः सबर्दुधाःशश या अप्रदुग्धाः। नव्यानव्या युवतयो भवन्तीर्म हद्देवानाम सुरत्वमेकम्॥

अर्थ-कुमारी युवा, विद्वान कन्या पूरे युवा विद्वान वरके साथ बिवाही जाये, छोटी अवस्था में कभी बिवाह का ध्यान भी न करे। ऐसाही यजुर्वेद अध्याय ८ मंत्र १ में भी लिखा है कि—

उपयाम गृहीतोस्यादित्ये मयस्त्वात्रिष्णु।
उरुगायैषते सोमस्त रक्षास्वमात्वदभन्॥

अर्थ–ब्रह्मचर्य सेवन किये हुई युवती कन्या का विवाह उसी के समान श्रेष्ठ और विद्वान वर के साथ किया जाये। और देखो अथर्व वेद कां०११ प्र० २४ अ० ३ मं० १८

ब्रह्मचर्य्येण कन्या ३ युवानं विन्दते पतिम्।

जैसे लड़के ब्रह्मचर्य्य सेवन से पूर्ण विद्या और सुशिक्षा को प्राप्त हो के युवति, विदुषी, अपने अनुकूल प्रिय सदृश स्त्रियों के साथ विवाह करते हैं, वैसेही (कन्या) कुमारी (ब्रह्मचर्य्येण ब्रह्मचर्य्य सेवन से वेदादि शास्त्रों को पढ़ पूर्ण विद्या और उत्तम शिक्षा को प्राप्त युवति होके पूर्ण युवावस्था में अपने सदृश प्रिय विद्वान् (युवानम्) पूर्ण युवावस्था युक्त पुरुष को (विन्दते) प्राप्त होवे।

इन प्रमाणों से "अष्ट वर्षा भवेद्गौरी" वाले श्लोकों का पूरा खडंन होता और यह शंका भी निवृत्य होती है कि कन्या रजोधर्म को प्राप्त होजायगी तो दान करने में दोष होगा, क्यों कि जब युवा होजाने पर विवाह करना लिखा है तो ऋतुमती का दान निषेध नहीं कहा जासक्ता। इस के सिवा मनुस्मृति का भी प्रमाण है देखो अ० ६ श्लो० ६०

त्रीणि वर्षाण्युदीक्षेत कुमार्यृतुमती सती।
ऊर्ध्वं तु कालादेतस्माद्विन्देत सदृशं पतिम्॥

ऋतुमती होने पर तीन वर्ष तक कन्या के वास्ते श्रेष्ठ वर ढूंढा जाय, जो उस से बढ़कर न मिले तो फिर गुण कर्म और स्वभाव में जो उस के बराबर हो उसके साथ विवाह दे।

ऐसी ही आज्ञा विष्णुस्मृति तथा बौधायन की है। कि—

ऋतु त्रय मुपास्यैव कन्या कुर्यात् स्वयं वरम् ॥

ऋतुमती होने से तीन वर्ष पीछे कन्या का विवाह करे।

त्रीणि वर्षाण्यृतुमती कांक्षेत पितृ शासनं।
ततश्चतुर्थे वर्षेतु विंदेत सदृशं पतिम् ॥

अर्थात् उत्तम वर की कांक्षा में तीन वर्ष तक ऋतुमती पिता के शासन में रहे, चौथे वर्ष बराबर का जो वर मिले उस से विवाह करे।

वेद और शास्त्रों ने यह सब वाक्य वृथा नहीं बक दिये हैं बहुत कुछ सोच समझ और आगम विचार करके यह नीति निश्चित की है, जिसमें स्त्री और पुरुष दोनों का कल्याण हो और उन के सुख में कोई बाधा न पड़े।

समझना चाहिये कि रजस् तो स्त्रीत्व का चिन्ह है, जिस कन्या में यह लक्षण न पाया जाय उसका तो दान ही करना निष्फल है, और छोटी अवस्था में इस की पहिचान असंभव है।

दूसरे आठ नौ वर्ष की लड़की या लड़कों के गुण अवगुण जान नहीं पड़ते, न कोई कह सक्ता है कि अच्छे निकलेंगे वा बुरे, और पुंसक होंगे वा नपुंसक और जहां ऐसे सम्बंध होते हैं, प्रत्यक्ष देखने में भी आरहा है कि कहीं तो लड़की के माता पिता पछताते, कहीं लड़के के मां बाप अपने पुत्रका दूसरा विवाह ठहराते, कहीं पत्नी अपने पति का आदर नहीं करतीं, कहीं बहू सासु को आठ २ आंसू रुलाती, ससुर को गालियां सुनाती और आतेही आते घर बारहबाट कर देती।

और जो दैवयोग से वह अच्छी और सुशील निकली और साहबजादे निकम्मे, तो आज बीबी का कड़ा उतार ले गये कल नथ चुराली, परसों कुछ और लिया, घर तीन तेरह किया ।

तीसरे जो अवस्था बालकों के गुण और विद्या सीखने की है उसमें जब उनपर गृहस्थी का बोझ डाला जायगा, तो क्योंकर पढ़ लिख सकेंगे, और जब अनपढ़ और निर्बुद्धि रह जायँगे तो क्या गति उनकी होगी, किस तरह गृहस्थी के जहाज़ को चलायेंगे जीविका कहां से लायेंगे, और संतान का पालन पोषण कैसे कर सकेंगे ।

चौथे सब से भारी उपद्रव यह भी है कि वैद्यक शास्त्र के मतानुसार १५-१६ वर्ष की अवस्था तक बालकों के जीने के लाले रहते, और ग्यारह बारह साल तक तो बहुत ही डर रहता है, और जो जीते भी हैं वह कम उमर में बिवाह होने से रोगी और दुर्बल हो जाते हैं, बाढ़ उनकी मारी जाती शरीर निर्बल पड़ जाता है, देह भरती नहीं, आयु भी क्षीण हो जाती और बल बुद्धि का नाश होता, और आपस में हित भी नहीं रहता है ।

इससे विदित है कि ऐसे निन्दित बिवाह से गुण और विद्या की हानि तो होती ही है, आरोग्यता भी बिगड़ती, आयु भी घटती, और बाल विधवा हो जाने का भी बहुत ही बड़ा भय रहता, कि जिस कन्या का बड़ी धूम से बिवाह किया और हजारों रुपये लुटाये थे, दो दिन नहीं बीते कि वह बिचारी आप लुट गई ! और कौन ? वह निर्दोष

बच्चा जो यह भी नहीं जानती कि विवाह किसको कहते हैं और रंडापा किसका नामहै, चुड़ियांतोड़ने और गहने उतारने के समय भौचक्की हो हो के कहती है क्यों मेरी चूड़ी तोड़ती और गहने छीने लेती हो! एक एक का मुँह तकती और पूछती है क्या हुआ जो रोती हो, उस व्यथा के सहने और देखने वालों की जो गति होती है, ध्यान करने से छाती फटती है, और उस अभागी की सारी उमर जिस संताप में कटती और मां बाप को जो दुःख उठाने पड़ते वही जानते हैं।

जहां ईश्वर की कृपा रहती और ऊपर लिखी आपदा नहीं आती है, वहां इस बिलक्षण विवाह का यह फल भी प्रत्यक्ष देख पड़ता है, कि गालों पर लाली आने नहीं पाती रंगत पीली पड़ जाती है, शरीर भरने नहीं पाता, देह दुर्बल हो जाती है, गर्भ थमता नहीं, ठहरा भी तो बच्चा जीता नहीं, और जिया भी तो आये दिन बीमार रहता है। स्त्री का यह हाल हो जाता है कि आज दांतों में दर्द, कल हाथ पांव में ऐंठन, परसों उठा नहीं जाता, जवानी उभरने नहीं पाती बुढ़ापा कमर झुका देता है।

यह वही भरतखंड देश है जिस के मनुष्यों की आयु अगले समय में सौ वर्ष से अधिक होती थी, और अब पचास साल भी जीना कठिन हो रहा है, यह वही देश है जहां लम्बे चौड़े, हृष्ट पुष्ट बलवान और पुरुषार्थी पुरुष होते थे, और अब दुबले पतले निर्बल और आलसी होते हैं! यह वही देश है जिस में एक से एक शूर वीर, यशस्वी और प्रतापी, बुद्धिमान, पण्डित, ज्ञानी और मुनीश्वर हो गये, और अब

महा कायर, दरिद्री, मूर्ख और अज्ञानी होते हैं! यह वही देश है जहां कैसी कैसी विद्वान् गुणवान सुशीला और आचारवती स्त्रियां होती थीं, और अब कैसी मूर्ख, गुणहीन दुष्ट, बद्चलन, और बेहया!

इस विकृति का कारण केवल अविद्या और यही बाल बिवाह है, आगे स्त्री और पुरुष जब परिपूर्ण विद्या और अनेक व्यवहार सीख लेते थे, तब बिवाह उनका होता था, और अब यहां तक उतावली होती है कि बच्चा पेट में आया और सगाई हो गई, जबान टूटने नहीं पाई फेरे भी पड़गये। इस कुरीति का प्रचार एक तो अनेक जातियों में बहुत सा बिभाग होजाने और उस पर भी ऊंच नीच का विचार बढ़ने से विशेष हो गया।

दूसरा कारण यह भी है कि दूर देश की यात्रा आगे कठिन रही, बाहर जाने में कष्ट और खर्चा भी अधिक पड़ता था, इस वास्ते सब अपने ही अपने नगर वा आस पास में लड़कियां देने लेने और बिरादरी के घर थोड़े रहने से जल्दी करने लगे, तीसरे मुसल्मानी राज में उपद्रव के डर से भी स्यानी लड़कियों को बिना बिवाही बैठा रखना अच्छा नहीं समझा जाता था। चौथे विद्याके लोप हो जाने और मूर्खता का अंधकार छा जानेमें माता पिताने बड़ा धर्म अपना केवल यही समझा कि जैसे बने जल्दी लड़की के हाथ पीले करदो, और अपने शिर का बोझ टालो। पांचवें धनाढ्य पुरुषों ने अपने जी का अरमान निकालने और छोटे बच्चों का खेल देखने के निमित्त भी इस कुचाल को बढ़ा दिया, और छठे

स्त्रियों की इस लालसाने कि जल्दी पोती पोते खिलावें और भी अनर्थ ढाया।

जो अब भी अपना और अपनी संतान का हित समझे और इस दूषित बिवाहको अविद्या का मूल, रोग और शोक का घर और अनेक विपत्ति की खानि जानकर इसे बंद करके प्रथम बालकों को गुण और विद्या सिखावें, और जब कम से कम १५-१६ वर्ष की लड़की और २४-२५ वर्ष का लड़का हो जाये तब उसका बिवाह करें, तो भी बहुत कुछ दोष मिट सकते हैं और जो वैद्यक शास्त्र के अनुकूल अच्छी तरह से योग्य और समर्थ हो जाने पर दोनों संयुक्त किये जावें तो संतान भी उनकी अति उत्तम, आरोग्य और बलवान उत्पन्न हो और उमर भी बढ़े, जैसा कि ऋग्वेद का प्रमाण है—

तुर्वीर हं शरदः शश्रमाणा।
दोषा वस्तोरुष सोजरुयन्ती॥
मिनाति श्रियं जरि मातनूना।
मय्यून पत्नी वृषणो जगम्युः॥

अर्थात् पूरे युवा पुरुष का पूरी युवा स्त्री के साथ बिवाह करने से उत्तम संतान उत्पन्न होती है और दोनों पूर्ण अवस्था को भी प्राप्त होते हैं।

इतने दिनोंतक रोकने में जो आचार उनके बिगड़ने और कोई दोष उत्पन्न होनेका भय समझा जाय, तो उससे बचाने

का उपाय यह है, कि प्रथम तो लड़कोंको गुरुकुलकांगड़ी या गुरुकुल संयुक्त प्रांत वृन्दावन में सात आठ वर्ष की आयु होतेही भेज दो और लड़कियों को कन्या महा विद्यालय जालन्धर अथवा कन्या पाठशाला लुधियाना वा देहरादून में प्रविष्ट करादो जिस से वह अपनी पूर्ण आयु तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए विद्याध्ययन करें।

द्वितीय उपाय यह है कि यदि गुरुकुल आदि में भेजने की शक्ति न हो तो कभी उनको स्वतंत्र होने और किसी व्यसन में पड़ने न दें, कुसंग से बहुत बचाये रहें, लड़कियां लड़कों के साथ और लड़के लड़कियों के संग बैठने और खेलने, या अकेले भी रहने वा गली, बाजार, नाच, तमाशे इत्यादि में कहीं फिरने न पायें, राग वा रस की पोथियां तथा कहानी पढ़ाई और सुनाई न जायें, सबेरे से रातमें सोने तक का समय ऐसा बांट दिया जावे कि एक क्षण भी खाली न रहने पायें।

धर्म के कामों में उनकी प्रीति, भगवत भजन में उत्साह गान विद्यामें रुचि, और लड़कोंको डंड, मुग्दर, कुस्ती, आदि का भी विशेष चाव दिलाया जाय, कसरत के शौक से बुरे लक्षण न पड़ेंगे, और इन सब यत्नों के करने से चलन शुद्ध रहेंगे, मन चंचल न होगा और रात दिन लिखने पढ़ने और अच्छे गुण सीखने में लगे रहेंगे और उत्तम शिक्षा पाजायँगे।

जब विवाह का समय आवे (यानी समावर्तन संस्कार के पश्चात् गुरुकुल से लौटने पर या यहीं विद्या आदि शुभ गुणों की प्राप्ति के बाद) तब सम्बन्ध करने से पहले माता पिताको चाहिये, कि वर और कन्याके जोड़ को सब तरहसे

बिचार ले, उनके गुण विद्या और स्वभाव की परीक्षा करें दोनों के शरीर बल और आयु को देखें और उन के कुलको भी अच्छी प्रकार जांचलें, मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक ६ व ७ में लिखा है कि—

महान्त्यपि समृद्धानिगोऽजाविधन धान्यतः ।
स्त्री सम्बन्धे दशैतानि कुलानि परिवर्जयत् ।

दशकुलों की कन्या के साथ चाहे वे गाय पशु और धन धान्य में कितनेही बड़ेहों कभी सम्बन्ध न करे, वे दश कुल येहैं—

हीन क्रियं निष्पुरुषं निश्छन्दो रोमशार्शसम् ।
क्षय्यामया व्यपस्मारिश्वित्रि कुष्टि कुलानिच॥

अर्थात् जिस कुल में उत्तम क्रिया न हो, जिस में उत्तम पुरुष न हों, जिस घर में कोई विद्वान न हो, जिस कुल में शरीर के ऊपर बड़े २ लोम हों जिस कुल में बवासीर, क्षयी रोग, सूजन का रोग, मृगीरोग, श्वेतकुष्ट, और जिसमें गलित कुष्ट हो।

मिताक्षरा का प्रमाण है कि ऐसी कन्या ढूंढ़े जो पढ़ी और अच्छे गुण और सुन्दर आचार रखती हो—

अनन्य पूर्विकां कांतामसपिंडांयवीयसीम् ५२॥
आरोगिर्णी भ्रातृमतीमसमानार्षगोत्रजाम् ।
पंचमात्सप्तमादूर्ध्वं मातृतः पितृतस्तथा ॥५३॥

दशपुरुषविख्याताच्छ्रोत्रियाणां महाकुलात्।
स्फीतादपि न संचारि रोग दोष समन्वितात्॥५४

जिसका किसी पुरुष के साथ प्रसंग न हुआ हो, जो सुन्दर हो, सपिंड न हो, वर से अवस्था डील और डौल में छोटी हो, अरोगिणी और भ्राता वाली हो, सगोत्र न हो मातृ पक्ष में पांच और पितृ पक्ष में सात पीढ़ी का अन्तर हो, जिस के मां और बाप दोनों की पांच २ पीढ़ी प्रसिद्ध हों और कुल जिस का विद्वान हो, और कुटुम्बी रोग दोषादि से रहित हों।

सपिंड, सगोत्र, और रोगी कुल जो बर्जित किये हैं वह इस हेतु से कि जिसमें खून का बराव रहे और संतान निर्दोष पैदा हो, और उमर वा डील डौल में छोटी इस वास्ते कहा है कि पुरुष स्त्री से बलवान होना चाहिये।

यही मति वैद्यक शास्त्र वालों की भी है जिन से खून मिला हो बिवाह उनके साथ कभी न किया जाय, क्योंकि इस में दूषित संतान पैदा होने का डर रहता है, वर की उमर कन्या से दूनी नहीं तो डेउढ़ी अवश्य हो, और स्त्री पुरुष से पतली और उस के कंधे तक लम्बी हो, बहुत नाटी न हो।

इसी तरह वर के वास्ते लिखा है कि वह भी

एतैरेव गुणैर्युक्तः सवर्णः श्रोत्रियो वरः।
यत्नात्परीक्षितः पुंस्त्वे युवा धीमान् जनप्रियः ५५

इन सब गुणों से संयुक्त सवर्ण और विद्वान ढूंढ़ा जाये, यत्न से उसके पुंसक होने की भी परीक्षा करली जाय, और

वह जवान, बुद्धिमान्, व्यवहार में चतुर, बाणी का मधुर और स्वभाव में नम्र हो ।

इस श्लोक में वर को सवर्ण ढूंढ़ना जो लिखा है उस का यह अर्थ है कि अपने हां वर्ण में रूप, रंग, गुण कर्म स्वभाव प्रकृति सब बातों में कन्या के बराबर अर्थात् उस का पूरा जोड़ हो, यह नहीं कि आज कल की भांति केवल जन्मपत्री से वर्ण और बिधि मिला ले, अच्छा बुरा कुछ न देखे और ब्याह दे ।

मनुस्मृति अ०६ श्लोक ८८ और ८६ में लिखा है कि—

उत्कृष्टायाभिरूपाय वराय सदृशाय च ।
अप्राप्तामपि तां तस्मै कन्यां दद्याद्यथा विधि॥
काममामरणात्तिष्ठेद् गृहे कन्यर्तुमत्यपि ।
न चैवैनां प्रयच्छेत्तु गुणहीनाय कर्हिचित् ॥

अर्थ-ऐसे श्रेष्ठ और रूपवान बर को कन्या देनी चाहिये जो सब बातों में उस के बराबर हो, चाहे जन्म भर कन्या बिना बिवाही बैठी रहे परन्तु गुण हीन बे जोड़ और दुष्ट पुरुष के साथ कभी उस का बिवाह न करे ।

बिवाह का सुख तभी प्राप्त होता है जब शारीरिक और आत्मिक दोनों भाव से वर और कन्या का जोड़ पूरा रहता, और प्रीति भी इन में तभी बढ़ती है जब स्वभाव और प्रकृति एक सी होती है ।

स्वभाव और प्रकृति एक सी न रहने से हरदम बिवाद रहता और बात २ में क्लेश बढ़ता है, रात दिन की कलह से

घरकी शोभा बिगड़ती,दरिद्रता घेर लेती,धर्मका नाश होता और ऐसे में जो संतान होती है वह भी महा दुष्ट, कुपात्र रोगी और दरिद्र।

इस लिये माता पिता का धर्म है कि नाई ब्राह्मण इत्यादि दूसरों पर न छोड़ कर स्वयंही दोनो के शरीर, रंग, रूप, चलन, व्यवहार, स्वभाव, प्रकृति, बल, बुद्धि, विद्या और गुण सब अच्छी प्रकार जांच और विचार के सम्बन्ध करें, और कुलका भी खूब देख भाल लें, कि प्रतिष्ठित, निष्कलंक, शुभाचार, गुणवान और और गृहस्थ है, यह नहीं कि केवल जाति देखली कि अपने से ऊंची है, और लड़का चाहे लुच्चा या कुन्बा सारा दुष्ट भी हो, लड़की व्याह दी।

जाति बड़ी होने से कोई कुलीन नहीं हो जाता है, कुलीन वहां कहलाता है जो दोषों से रहित और गुणों में संपन्नहो, और कुलीन भी हुआ तो किस काम का, जब लड़की को सुख न प्राप्त हुआ, यह बड़ी भोड़ी चाल है कि झूठी डींग मारने को कि हम ने ऐसी ऊंची जाति में अपनी. लड़की विवाही।

उस बेचारी का गला काटा जाता है और आप भी यह फल पाते हैं, कि हज़ारों देते और पीछा नहीं छूटता है। धर्म शास्त्र में यह कहीं लेख नहीं है कि ऊंचे कुल में लड़की दे और नीचे कुल की लड़की ले, जहां लिखा है वह यही कि सम अर्थात् अपने वर्ण का हो और गुण विद्या वा भलमंसी में भरापुरा हो, कहा है कि—

ययोरात्म शमवित्तं जन्मैश्चर्य्या कृतिर्भवः।
तयोर्विवाहो मैत्री च नोत्तमाधमयो क्वचित्॥

अर्थात् धन, जाति (वर्ण) ऐश्वर्य रूप और बिस्तार में जो अपने बराबर हो उसी के साथ बिवाह और मैत्री करना चाहिये, न कि उसके संग जो अपने से ऊंचा या नीचा हो।

बैर, प्रीति, बिवाद, व्यवहार और बिवाह यह सब बराबर वालों ही के साथ करना योग्य है। सजाति और भाई बन्दी में न कोई बड़ा है और न कोई छोटा, जितने हैं सब बराबर इस लिये अपने ही वर्ण के जिस कुल में उत्तम लोग, उत्तम व्यवहार और उत्तम लड़के या लड़कियां मिलें उन्हीं से सम्बन्ध करना चाहिये।

जिस तरह छुटपने का बिवाह निन्दित है इसी प्रकार आठ वर्ष की कन्या का साठ वर्ष के बाबा से बिवाह करना अथवा चौबीस पच्चीस वर्ष की कन्या का छः सालके लड़के का सम्बन्ध करना भी महा दूषित है और इससे भी अनेक दोष उत्पन्न होत हैं।

लेन देन यानी बिवाहपर रुपया ठहराना

यह भी बड़ी खोटा व्यवहार इन दिनों हो रहा है कि कोई तो कुछ लेके लड़की देते हैं, कोई लड़के का मोल तोल भेड़ बकरियों की नाई करते और जो अति कुलीन कहे जाते हैं, वह तो इस व्यापार से जन्म जन्मान्तरके लिये जीविका बना लेते हैं, दो चार लड़की लड़के हुए मानों घर का दरिद्र जाता रहा और यह रीति केवल निर्धनों में ही नहीं बरन् धनवान पुरुष भी चुकाते और ठहराते हैं, कि इतना तिलक में लेंग, इतना द्वारे पर पहुंच के और इतना इतना फलानी फलानी रीति के समय।

यह चाल महा निन्दित और अनेक दोष कारक है और यह भी इसी का नीच फल है, कि कहीं तो पांच वर्ष की बच्ची, साठ बर्ष के बूढ़े को बिवाही जाती, और कहीं तीस चालीस साल की स्त्री बिना व्याही बैठी रहतीहै, कहीं पीपल वा बर्गद से फेरे पड़ जाते और कहीं एकही के बिवाह में घर बिक जाते हैं।

लड़की लड़कों का बिवाह एक धर्म प्रबन्धहै, न कि लौंड़ी गुलाम का सौदा, अब तो केवल ब्राह्म बिवाह होताहै, अगले समय में जब आठ प्रकार के बिवाह होते थे, तब भी ऐसी अनरीति न थी, ब्राह्म बिवाह की प्रकीर्ति मानव धर्मशास्त्र में केवल यह लिखी है कि—

आच्छाद्य चार्चयित्वा च श्रुति शीलवतेस्वयम्।
आहूय दानं कन्याया ब्राह्मो धर्मः प्रकीर्तितः॥

अर्थात् कन्या को वस्त्र आदि से अलंकृत कर यानी कपड़े गहने पहना उसके योग्य जिस सुशील और विद्वान वर को बुलाया हो उसका सत्कार करके दान देवे।

मिताक्षरा में यह भी लिखा है कि अलंकृत करने में अपनी शक्ति से न बढ़े और वह वाक्य यह है—

ब्राह्मो बिवाह आहूय दीयते शक्त्यलंकृता॥

अर्थात् ब्राह्म बिवाह में जितनी सामर्थ्य हो उस के अनुसार कन्या को अलंकृत करके दान करे।

शास्त्रों की बांधी इस उत्तम मर्य्यादा को तोड़ कर जो कुरीति चलाई और धर्म मार्ग में विघ्न डाला है यह भी

पिछले समय के धनाढ्य पुरुषों के उन्माद का फल है, कि उन्हों ने अपने धन के मद में झूठे नाम के वास्ते (हज़ारों रुपये नाच, रंग, तमाशे, आतिशबाज़ी वा बागोबहार इत्यादि में लगा) तरह २ का विस्तार बढ़ाया, जिस से ग़रीबों का मरण हो गया और अंत को यह सब पाप होनेलगे, इस दुष्ट और धर्म नाशक चाल को जैसे बने जल्दी मिटाना अति आवश्यक है।

बिवाह आदि उत्सवों में और भी बहुत से भोंड़े लेन देन होते, और उनके प्रभाव से कुछ टंटा बखेड़ा अवश्य ही हो जाता, और रीतें भी जो की जाती हैं, महा नीच और निन्दित जैसे वर को झाड़ू की सींकें मारना, उस से जूती पुजवाना, कन्या की घँघरी, सुथन्ना आदि उस के गले में डालना, उस का झूठा खिलाना, कन्या के नहाये हुये गंदे पानी से वर को नहलाना, कुम्हार का चाक फिराना इत्यादि और अभिप्राय इन कुरीतियों का यह बताया जाता है, कि यह सब करने से सगुन होता और वर कन्या के वश रहता है वाह! वाह!

यह कुल उपहास की बातें और मूर्खता के लक्षण हैं, वर को कन्या का वशीभूत हो रहना चाहिती हो तो उसको अच्छे गुण सिखाओ जो देखके वह मोहित हो जाये।

इस चुहल और टोने टटकों के सिवा स्त्रियां अपनी सुशीलता और बुद्धि का चमत्कार भी यों दिखाती हैं कि बरात दरवाज़े पर पहुंची और गालियां गाने लगीं, और वह भी कोने में बैठ कर नहीं, कोठों पर चढ़के, में कमरों

खड़ी होके, सड़कों पर निकल के, बाज़ारों में चलके, और गालियां भी वह मज़ेदार जो बाजारी औरतें भी मुंह स निकालते शर्माती हैं।

पर यह बेहया ! ढोल बजा और गला फाड़ २ सुनाती हैं, और फिर केवल समधियों को ही नहीं अपने पुरुषों के भी दादा परदादा बखानती हैं और हित मित्र अड़ोसी पड़ोसी किसी को भी नहीं छोड़तीं और वह ऊधम मचाती हैं कि सुनने वाले कानों पर हाथ धरते हैं, पर इन को जरा सी लाज नहीं आती है।

इसी तरह बुलावा चलावा जाने की यह धज निकाली है कि जवान २ स्त्रियां सोलहों शृंगार करके झुंड की झुंड निकलतीं और बाजारों में छम २ करतीं, हंसती और इठलाती जाती हैं,ऐसीही और बहुतसी कुचालें पड़ गईहैं,जो सब निर्लज्जता की खान, अधर्म की जड़ और अनेक उपाधियों की मूल हैं।

सज्जन स्त्रियों को चाहिये कि इन निन्दित कर्मों के पास न जावें, और न इनको कभी साधारण समझें, यह सब पत उतारने वाली बातें और सर्व दोषों की निदान हैं और इन्हीं कुचालों को देख २ बच्चे भी सत्यानाश जाते हैं

पुत्र का विवाह अथवा द्विरागमन कराके जब बधू को घर लाओ, उसका अच्छी तरह सत्कार करो, बड़े प्यार और मधुर वाणी से नित्य बोलो, कभी कड़वी बात न कहो,अपनी पुत्री के समान मानो, प्रीति सहित कुल की रीति और घर के काम काज बतलाओ, धरना, उठाना और आये गये का

यथा योग्य शिष्टाचार करना सिखलाओ, पढ़ी लिखी न हो तो हित से पढ़ाओ, कोई काम उस से बिगड़ जाये तो ताने तिश्ने न दो धीरे से समझाओ, दया और प्रेमसे उसके मन को अपने वश में करलो, वस्त्र आभूषण आदि से सदा प्रसन्न और सब भांति सन्तुष्ट रक्खो, अच्छी प्रकृति डालो, मधुर स्वभाव बनाओ, सती धर्म सिखाओ और छोटी हो; तो जब तक पूरी युवा न होजाय गर्भाधान संस्कार वा सुहागरातकी रीति का विधान न करो, पुरुषके पास उठने बैठने से बचाये रहो, क्योंकि छोटी अवस्था में स्त्री और पुरुष का संभोग दूषित तो है ही, ऋतुमती होने से पहले प्रसंग करना महा पातक भी लिखा है—

देखो निर्णयसिन्धु का प्रमाण—

प्राग्रजोदर्शनात्पत्नीं नेयाद्गत्वा पतत्यधः ।
व्यर्थीकारेण शुक्रस्य ब्रह्महत्यामवाप्नुयात् ॥

अर्थात् रजोदर्शन से पहले स्त्री से भोग करने में ब्रह्म हत्या का पाप होता और नरक (दुःख) भोगना पड़ता है। ऐसाही भविष्यपुराण में भी कहा है कि—

रजोदर्शनतः पूर्वं न स्त्रीसंसर्गमाचरेत् ।
संसर्गं यदि कुर्वीत नरके परिपच्यते ॥

अर्थ—रजोदर्शन से पूर्व स्त्री के साथ प्रसंग उचित नहीं, जो ऐसा करता है नरक में जाता है।

और अब तो हमारी सरकार ने क़ानून भी बना दिया है कि चाहे स्त्री रजोधर्म को भी प्राप्त हो जाय पर बारह साल से उसकी उमर एक दिन भी कम होगी और पुरुष प्रसंग करेगा तो दश वर्ष क़ैद रहेगा और कालेपानी भेजा जायगा (क्या ही अच्छा होता कि हमारी न्यायशीला दयाकारिणी वृटिश गवर्नमेन्ट हमारी इस हीन दशा पर दया करके क़ानून रस्म सती, वा १२ वर्ष की कम आयुवाली से प्रसंग की भांति यह भी क़ानून बना देती कि १६ वर्ष से कम स्त्री २५ साल से कम पुरुष का जो बिवाह करेगा, दंड पावेगा। क्योंकि जब सृष्टि की आदि से आज तक के समस्त वेद वा शास्त्र तथा सबही ऋषि, मुनि इस बाल बिवाह को निन्दित बता रहे हैं लेकिन हम अन्ध नहीं मानते ऐसी दशा में सिवाय आपकी दया के और कोई उपाय नहीं दीखता है) और इस से भी बढ़कर दुर्गति यह होगी कि स्त्री कचहरी में बुलाई और डाक्टर को दिखाई जायँगी, मां बहिनों को गवाही भरनी पड़ेगी, सत्तर पीढ़ियों की नाक कटेगी, सारी प्रतिष्ठा मिट्टी में मिलेगी, कुन्बे में कोई भी मुँह दिखाने योग्य न रहजायगा घर भर को डूब मरना पड़ेगा ।

इसलिये आवश्यक है कि इस की बहुत बड़ी रोक रक्खो जिस में यह कोई आपदा सामने न आयें, शरीर, धन धर्म और आबरू किसी में बट्टा लगने न पाये, और आगेको बाल बिवाह का कभी नाम भी न लो, और जो २ निन्दित कर्म, खोटे व्यवहार, दूषित चाल और भौंड़ी रीतें हैं सब को छोड़ उचित और अनुचित विचार,जाति मात्र के कुलीनोंको दंडवत कर, वर वा कन्या को श्रेष्ठ कुलों में ढूंढ़, उन के

गुण, कर्म, स्वभाव और प्रकृति की अच्छी तरह से जांच, और सब बातों में पूरा जोड़ देख, बिधि पूर्वक उनका बिवाह करो।

और जो कुछ बन पड़े अपनी सामर्थ्य के अनुसार उन को देकर आशीर्वाद दो कि फूलें फलें और सुख से रहें।

❀ विधवा धर्म ❀

अब संक्षिप्त से कुछ विधवा स्त्रियों का भी धर्म लिखे देता हूँ कि पति बियोग के पश्चात् उन का क्या धर्म है–

आसीता मरणात् क्षान्ता नियता ब्रह्मचारिणी।
यो धर्म्म एकपत्नीनां कांक्षन्ती त मनुत्तमम्॥

अर्थात् धर्म की कांक्षा करने वाली सती को चाहिये कि मरण काल तक ब्रह्म चारिणी ब्रत धारण करे।

ब्रह्मचारिणी बृत से यहां यह अर्थ नहीं हैं, कि शिर मुड़ाये, कपड़े रंगे, और जंगल पहाड़ों में टकराती फिरे, नहीं सावधान हो के अपने घर में बैठे गृहस्थी के सब धंधे करे लड़के वाले हों तो उनको पाले, सारे व्यवहार चतुरता से बर्तें, पति का नाम क़ायम रक्खे, पर हां अपने आचार और विचार को शुद्ध रक्खे, राग वा रस को त्याग दे, मन से विरक्त हो रहे।

तत्राहिंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्य परिग्रहायमाः।

यह जो पांच प्रकार के यम कहलाते हैं इन को साधे, अर्थात् (अहिंसा) किसी को पीड़ा न दे, बैर बिरोध किसी से न रक्खे, दुख दर्द में सब का साथ दे, दया से भरी रहे (सत्य) सदैव सच बोले सत्य मार्ग में चले, (अस्तेय) किसीकी वस्तु बिना स्वामीकी आज्ञा के न ले,कोई बुरा काम न करे (ब्रह्मचर्य) उपस्थेंद्रिय का संयम रक्खे, व्यभिचार में न पड़े (अपरिग्रह) लोभ मोह इत्यादि में न फंसे । और नियम यह धारण करे—

शौचसंतोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानिनियमा

(शौच) अर्थात् नित्य स्नानादि से पवित्र रहे ।

(संतोष) सबर के साथ निर्बाह करे, दुख सुख समकर माने, हानि में शोक और लाभ में हर्ष न करे ।

(तप) व्रत रक्खे, दुःख को सहे, कैसा ही कष्ट पड़े धर्म को कदापि न छोड़े ।

(स्वाध्याय) ज्ञान और उपदेश की बातें सुने, सुनाये, नीति और धर्म शास्त्रों को पढ़े पढ़ाये ।

(ईश्वर प्राणिधान) ईश्वर का ध्यान और भजन करे ।

ध्यान, दर्शन, स्पर्श, आलिंगन, समागम, क्रीड़ा, कथा और एकान्तबास, यह जो आठ प्रकार के मैथुन कहलाते हैं इनके समीप न जाये ।

अर्थात् ध्यान कभी किसी पुरुष का न करे ।

(दर्शन) पुरुषों को न निहारे ।

(स्पर्श) किसी को अपना देह न छुलाये ।

(आलिंगन) किसी को छाती से न चिपटाये।
(समागम) किसी से सट (मिल) कर न बैठे।
(क्रीड़ा) किसी से हंसी ठट्ठा न करे न कोई खेल खेले
(कथा) राग रस की बातें न करे और न सुने।
(एकान्त बास) अकेली न रहे।

आंख, कान, नाक, त्वचा और जिह्वा जो पांच ज्ञान इंद्रिय और हाथ, पांव, गुदा, उपस्थ और वाणी ये पांच कर्म इन्द्रिय हैं, इन दशों का ऐसा यत्न रक्खे कि कोई इनमें से बहकने न पाये। जैसे आंख निर्लज्ज न होजाये, नाक क्रोध से चढ़ी न रहे, कान अनुराग की बातें या बुराइयां सुनने न लगें, त्वचा सुकुमार न होजाये, जिह्वा चटोरी न बन जाये, हाथ किसी पर न उठें पांव खुल न निकलें, गुदा और उपस्थ विषय में न पड़ें, वाणी कठोर, झूंठ, फूहड़ और व्यर्थ मुँहसे न निकले।

इन सब इन्द्रियों को ऐसा वशमें रक्खे कि एक भी बहकने न पावे, नहीं तो कहा है कि—

इंद्रियाणांतु सर्वेषां यद्येकं क्षरतीन्द्रियम्।
तेनास्य क्षरति प्रज्ञा दृतेःपात्रादि वोदकम्॥

जिस तरह मशक में एक छेद के रहने से सब पानी गिरजाता है, उसी प्रकार इन इन्द्रियों में से एक चंचल हो जाती तो सारी बुद्धि भ्रष्ट होजाती है।

इस लिये मनुजी महाराज का वाक्य है—

इन्द्रियाणां विचरतां विषयेष्वपहारिषु।
संयमे यत्नमातिष्ठेद्विद्वान यंतेव वाजिनाम्॥

जिस भांति अच्छा चतुर सारथी घोड़ों को बहकने नहीं देता है, उसी तरह अपनी सब इन्द्रियों को खोटे कामों में विचरने से रोके रहे।

और इन सब का राजा मन है उस को खूब मारे जो वह स्थिर रहेगा तो यह कोई चंचल न होंगी. शांति और नम्रता स्वभाव में रक्खे, सबकी सहे, किसी का अपमान न करे।

मनुस्मृति का आदेश है—

अति वादां स्तितिक्षेत नाव मन्येत कंचन।
न चेमन्देहमाश्रित्य वैरं कुर्वीत केनचित्॥

अर्थात् कोई बुरा भी कहे तो चुप हो रहे, आप कभी, अप्रिय बात न कहे और न मन में द्वेष रक्खे।

क्रुध्यन्तन्न प्रतिक्रुध्ये दाक्रुष्टः कुशलम्वदेत्।
सप्तद्वारावकीर्णाञ्च न वाचमनृताम्वदेत्॥

कोई कितना ही क्रोध करे, आप शांत रहे कुछ कड़ी बात भी कहे तो आप मुलायम बोले, कोई फूहड़ शब्द मुहँ से न निकाले। सब का भला चाहे, किसी का बुरा न चेते, आप दुख उठाये, दूसरे को ज़रा सा भी कष्ट न पहुँचाये, लज्जा का रूप हो जाये, अपने साये से भी शर्माये।

अच्छे लोगों की मति पर चले, माता पिता सासु ससुर सब बड़े और बुद्धिमानों की आज्ञा और उपदेश माने, अपने मन की न करे, दुष्ट नास्तिक, लम्पट, विश्वासघाती, मिथ्या-वादी, स्वार्थी, कपटी, छली, चुगल, और बदकार स्त्रियों की बात न सुने, और न उनके पास बैठे ।

मद्य, मांस और सब ऐसे पदार्थ जिन से बुद्धि नष्ट और शरीर में मद उत्पन्न हो कभी न खाये, जीव के आधारमात्र सूक्ष्म और साधारण आहार किया करे, आलस्य और बल को तोड़े रहे ।

जीविका का कोई सहारा न हो तो सिलाई, लिखाई पढ़ाई इत्यादि मेहनत मजदूरी से निर्बाह करे, कुछ भी न जुड़े तो फल फूल कन्दमूल खाकर रहे, अधर्म वृत्ति से सुख की इच्छा कदापि न करे, कैसी ही आपदा पड़े धर्म हाथ से न दे क्यों कि अन्त में वही काम आता है ।

देहश्चितायां परलोक मार्गे
कर्म्मानुगो गच्छति जीवएकः ॥

यह दुष्ट शरीर तक को अपना समझा जाता है और जिसे बड़ेही बनाव और शृंगार से रक्खा था चिता ही पर साथ छोड़ देता है, और सिवा अपने कर्मोंके कोई संग नहीं जाता है । इस लिये कहा है कि—

तस्माद् धर्म्मं सहायार्थं नित्यं सञ्चिनुयाच्छनैः
धर्म्मेणहि सहायेन तमस्तरति दुस्तरम् ॥

मनु० ४-२४२

पर जन्म में सुख और जन्म के सहायतार्थ नित्य धर्मको बटोरे, क्योंकि धर्म ही के सहाय से बड़े २ दुस्तर दुःख सागर को जीव तर सकता है। और यह व्रत करले कि—

ब्रह्म महूरत में उठे, करे ईश का ध्यान।
भजन करे जगदीश का जाते सब कल्याण ॥
चलत फिरत बैठत उठत, सोवत जागत आदि।
ताको नित ध्यावत रहे. जो प्रभु परम अनादि ॥

बस यही सब आचार विचार और इन्द्रिय दमन करना ब्रह्मचर्य है केवल इसी कृति से मोक्ष मिलती और योग के फल प्राप्त होते हैं। मनुस्मृति का प्रमाण है—

वशेकृत्वेन्द्रियग्रामं संयम्य च मनस्तथा।
सर्वान्संसाधयेदर्थानाक्षिरावन् योगतस्तनुम्॥

अर्थ–जो सब इन्द्रियां और मन वश में रखता है तो योग के सारे फल यों ही प्राप्त होजाते हैं।

इन्द्रियाणान्निरोधेन रागद्वेषक्षयेन च।
अहिंसयाच भुतानाममृतत्वाय कल्पते ॥

इन्द्रियों को रोकने राग और द्वेष को छोड़ने और हिंसा न करने से आवागमन छूट जाता है।

मन को मारने का बड़ा उपाय यह है कि क्षण मात्र भी खाली न बैठे चार घड़ी रात रहे उठे, शौच स्नान करके ईश्वर का ध्यानकरे, तत्पश्चात् बाल बच्चों का मुँह हाथ धुला घर की टहल में लगे, और सब धंधों से चट पट छुट्टी करके ज्ञान, वैराग्य, ईश्वर भजन इत्यादि पुस्तकों का पाठ करे और विचारे, व्रजबिलास या प्रेमसागर की सी पुस्तकों को कभीं हाथ भी न लगाये।

यह संक्षिप्त से बिधवा धर्म लिखा गया अधिक आप स्वयंही धर्मशास्त्र आदि सद्ग्रन्थों को पढ़कर विचारलें।

* शमित्योम् *

ता० ७नवम्बर
सन् १९१० ई०

द्वारकाप्रसाद अत्तार
शाहजहांपुर.



पुस्तक मिलने का पता—

मुं० द्वारकाप्रसाद अ

बहादुरगंज–शाह

Ang